जुलाई 2003
Rs. 10/-
चन्दामामा

HERO
PIRANHA
ACTIVE
CADET HX
YANKEE
ROBO COP
Heroes start early.
Ride, race, take a tumble or even take a fall.
Because it's never too early to be a hero.
HERO CYCLES

विशेष आकर्षण

सम्पुट - १०७ जुलाई - २००३ सञ्चिका - ७

विद्यावान

१५

बदला भाग्य

५६

माया सरोवर - १८

९

युवरानी का चन्दामामा

६७

अन्तरङ्गम्

SUBSCRIPTION

For USA and Canada
Single copy $2
Annual subscription $20

Remittances in favour of
Chandmama India Ltd.
to

Subscription Division
CHANDAMAMA INDIA LIMITED
No. 82, Defence Officers Colony
Ekkatuthangal, Chennai - 600 097
E-mail : subscription@chandamama.org

शुल्क

सभी देशों में एयर मेल द्वारा
बारह अंक ९०० रुपये
भारत में बुक पोस्ट द्वारा १२० रुपये
अपनी रकम डिमांड ड्राफ्ट या
मनी-ऑर्डर द्वारा
'चंदामामा इंडिया लिमिटेड'
के नाम भेजें।

संस्थापक
बी. नागिरेड्डी और चक्रपाणि

अन्तिम महान आदर्शवादी का स्मरण

आजादी के बाद भारत ने अनेक क्षेत्रों में प्रभावशाली कदम उठाये हैं। कोई कारण नहीं है कि हमें अपनी उपलब्धियों पर गर्व नहीं करना चाहिए - लेकिन यह तभी तक जब तक हम उनकी तुलना उन संघर्षों और मुसीबतों से नहीं करते जिनका सामना करते हुए कुछ अन्य देशों ने कितना कुछ प्राप्त कर लिया है। जापान ने लगभग भारत के आजादी मिलने के समय ही शून्य से आरम्भ किया। इसने जो उपलब्ध किया है उसे एक शब्द में वर्णित किया जा सकता है - चमत्कार!

यह सच है कि भारत एक विशाल देश है। हम किसी प्रकार के अनुशासन के अधीन नहीं है। हम या तो विकास करने का संकल्प लें, प्रगति करें अथवा तमस और सत्ता के लिए तुच्छ 'तू तू-मैं मैं' के पंक में डूब जायें, यह हमारे ऊपर निर्भर करता है।

हमने यह धारणा बना ली है कि सत्ता में रहे बिना हम देश की सेवा नहीं कर सकते। हम सैकड़ों तरीकों से देश की सेवा कर सकते हैं। लोकतांत्रिक मूल्यों की मर्यादा बनाये रखना, भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष करना, मानव मूल्यों तथा आदर्शों के अनुकूल अपने सामूहिक जीवन में आचरण करना - ये शायद आज प्रत्येक भारतीय के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण कर्त्तव्य हैं। इन आदर्शों के अन्तिम महान समर्थक थे श्री जयप्रकाश नारायण। उन्होंने अपने आचरण के द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि जनता का सम्मान पाने के लिए सत्ता में रहना आवश्यक नहीं है।

वे ठीक एक सौ वर्ष पूर्व इस धराधाम पर आये थे। हम कामना करते हैं कि उनकी जन्म शताब्दी हम सबके लिए आत्म निरीक्षण का एक अवसर बने। भारत में पतन की खाई से उठकर उतुंग ऊँचाइयों तक पहुँचने की क्षमता है। जयप्रकाश नारायण ने यह घोषणा की थी। यदि हम अपने हृदय के भीतर सुनें तो अब भी उनकी आवाज की प्रतिध्वनि सुन सकते हैं।

Visit us at : http://www.chandamama.org
सम्पादक : *विश्वम*

'हीरोज़ ऑफ इंडिया' प्रश्नोत्तरी में अपनी प्रविष्टि भेजें और आश्चर्यजनक पुरस्कार जीतें।

भारत के नायक-२२

यहाँ हमारे देश के कुछ साहित्यिक नायकों का प्रसंग है। क्या तुम उन्हें जानते हो?

तीन सर्वशुद्ध प्रविष्टियों पर पुरस्कार में साइकिलें दी जायेंगी।

1. मैं भारतीय अंगरेजी लेखन का अग्रगामी हूँ। मेरे कुछ उपन्यास हैं - कुली, अनटचेबल, टू लीव्स एण्ड अ बड। मैं कौन हूँ?

---

2. मैं एक हिन्दी कवि हूँ। मेरी सबसे प्रसिद्ध कृति है 'मधुशाला' और यह बिलकुल मुफ्त भेंट है। क्या तुम मेरा नाम जानते हो?

---

3. मैं एक क्रांतिकारी तमिल कवि हूँ। हमारी अधिकांश कृतियाँ सामाजिक सुधार पर हैं। मेरी एक प्रसिद्ध कृति है - कुडुम्बविलकू। मैं कौन हूँ?

---

4. मैं बंगाली लेखक हूँ। मैंने चरित्रहीन और देवदास की रचना की है। मेरा नाम क्या है?

---

5. सन् १९८४ में अपने उपन्यास 'कायर' के लिए मुझे ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला। मैं 'चेमीन' उपन्यास का भी लेखक हूँ जो बाद में हिट फिल्म हो गई। मैं केरल निवासी हूँ। मैं कौन हूँ?

प्रत्येक प्रश्न के नीचे दिये गये स्थान को स्पष्ट अक्षरों में भरें। इन पाँचों में से आपका प्रिय आदर्श नायक कौन है? और क्यों? दस शब्दों में पूरा करें :

मेरा प्रिय साहित्यिक नायक .... है,

क्योंकि ....

प्रतियोगी का नाम: ....

उम्र: .... कक्षा: ....

पूरा पता: ....

....

पिन: .... फोन: ....

प्रतियोगी के हस्ताक्षर: ....

अभिभावक के हस्ताक्षर: ....

इस पृष्ठ को काटकर निम्नलिखित पते पर ५ अगस्त २००३ से पूर्व भेज दें।

हीरोज़ ऑफ इंडिया प्रश्नोत्तरी-२२
चन्दामामा इन्डिया लि.
नं.८२, डिफेंस ऑफिसर्स कॉलोनी
ईकाडुथांगल, चेन्नई-६०० ०९७.

निर्देश :-

१. यह प्रतियोगिता ८ से १४ वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए है।
२. सभी भाषाओं के संस्करणों से इस प्रतियोगिता के लिए तीन विजेता चुने जायेंगे। विजेताओं को समुचित आकार की साइकिल दी जायेगी। यदि सर्वशुद्ध प्रविष्टियाँ अधिक हुईं तो विजेता का चुनाव 'मेरा प्रिय नायक' के सर्वश्रेष्ठ विवरण पर किया जायेगा।
३. निर्णायकों का निर्णय अंतिम होगा।
४. इस संबंध में कोई पत्राचार नहीं किया जायेगा।
५. विजेताओं को डाक द्वारा सूचित किया जायेगा।

पुरस्कार देनेवाले हैं

RESERVE YOUR COPY NOW!

Do you want your children to sharpen their faculties by working on puzzles?
Come to Junior Chandamama for loads of puzzles and games.

Are you looking out for interesting new stories to be read out to the kiddies?
Pick up a copy of Junior Chandamama, and you'll find them there.

SPECIAL OFFER

With every one year's subscription get a

Luxor Junior Crayfun set worth Rs. 45* absolutely Free! Rush!

PAGE AFTER PAGE WILL KINDLE YOUR CHILD'S IMAGINATION

ISSUE AFTER ISSUE, MONTH AFTER MONTH

* offer valid upto 30th September, 2003 only.

SUBSCRIPTION FORM

Please enrol me as a subscriber of Junior Chandamama. I give below the required particulars:

Name : ....

Address : ....

....

....

PIN Code : ....

I am remitting the amount of Rs.120/- for 12 issues by Money Order/Demand Draft/Cheque No.................... on.................................... Bank .... branch drawn in favour of Chandamama India Ltd., encashable at Chennai (outstation cheque to include Rs.25/- towards Bank Commission).

Place : ....

Date : ....

Signature

प्रकाश और अंधेरा

भूपति कपड़ों का मशहूर व्यापारी था। उसने व्यापार में अपार अनुभव प्राप्त किया। साथ ही अपार धन और प्रतिष्ठा भी कमायी। धनाढ्य होते हुए भी वह मामूली सूत के कपड़े पहनता और सादा भोजन करता था। पर वह कंजूस नहीं था। जरूरतमन्द गरीबों को धन देकर मदद करता था।

रंगा, भूपति के यहाँ लंबे अर्से से काम करता आ रहा था। वह कभी-कभी भूपति से पूछता भी था, ''मालिक, आपके पास अपार संपदा है। आराम से ज़िन्दगी काट सकते हैं। पर आप ऐसा क्यों नहीं करते?''

परंतु भूपति इसका कोई जवाब नहीं देता; केवल हँसकर चुप रह जाता था।

एक बार व्यापार में भूपति ने सब कुछ खो दिया। अपने मालिक को इस दुस्थिति में देखकर रंगा ने कहा, ''मालिक, यह क्या हो गया! एक समय आप धनाढ्य थे। पर आज दरिद्र हैं। आप कैसे ऐसी ज़िन्दगी गुज़ार पायेंगे?'' इसपर भूपति ने मुस्कुराते हुए कहा, ''रंगा, धनी होते हुए भी हमेशा दरिद्र की ही तरह मैंने ज़िन्दगी गुज़ारी। सुख एक बंधु मात्र है। कष्ट ही शाश्वत है। जीवन प्रकाश व अंधेरे का सम्मिश्रण है। धनी होने पर विलासमय जीवन बितायें तो उसके अभाव में जीवन नरक सा लगने लगता है। जब मेरी स्थिति अच्छी थी, तब मैंने दुखी लोगों की मदद की। उनमें से कुछ अब मेरी मदद कर रहे हैं।''

इसके कुछ समय बाद भूपति ने फिर से व्यापार में खूब कमाया। जीवन के प्रति उसका दृष्टिकोण अब भी वैसा ही है, जैसा पहले था।

- प्रभुराम. आर

माया सरोवर

18

(शेरसिंह और गणाचारी को बन्दी बनाकर सिद्धसाधक हिरण्यपुर के राजा कनकाक्ष को देखने गया। हंसों के रथ पर से जयशील को जंगल में एक स्थान पर बाघ के मुँह में जानेवाली कांचनमाला दिखाई दी। जयशील ने कांचनमाला की रक्षा की। उस वक्त एक पेड़ की ओट में से माया सरोवरेश्वर ने जयशील के कंठ की ओर एक फंदा फेंका। इसके बाद...)

जयशील अपने कंठ में फंदे के फँसते ही पल भर के लिए चकित रह गया। उसने मुड़कर देखा। उसे जलग्रह पर माया सरोवरेश्वर तथा उसकी बगल में एक घोड़े पर मकरकेतु दिखाई दिये। जयशील संभल गया। उसने अपने कंठ में फँसनेवाले फंदे को तलवार से काटना चाहा, पर रुककर सरोवरेश्वर की ओर देखा।

माया सरोवरेश्वर अपने हाथ के रस्से को थोड़ा खींचकर बोला, ''तुम्हीं हो न जयशील नामक महावीर? तुमने रस्से को तलवार से काटना चाहा, पर रुक क्यों गये?''

''हाँ, अब मैं समझ गया, तुम माया सरोवरेश्वर हो न? तुमने मेरे कंठ में फंदा डाला, मगर तुम्हें उस फंदे को कसकर तुरंत मेरे प्राण लेने चाहिए था, लेकिन तुमने ऐसा क्यों नहीं किया? बताओ तो सही?'' जयशील ने पूछा।

''मैं एक सरोवर का राजा हूँ। मुझे महान महासत्व मानव के प्रश्न का उत्तर देने की कोई

ज़रूरत नहीं है।'' माया सरोवरेश्वर ने कहा।

जयशील क्रोध में आकर कोई जवाब देने को था, पर तब तक चकित हो यह सारा दृश्य देखनेवाली कांचनमाला संभलकर बोली, ''मामाजी, तुम हंसों के रथ से गिरकर जीवित हो, इस बात की मुझे बडी ख़ुशी हो रही है। मगर तुम जयशील नामक इस युवक की कोई हानि न करो, क्योंकि इन्होंने मुझे बाघ से बचाया है।''

''बेटी कांचना ! मैंने वह सारा दृश्य अपनी आँखों से देखा है। मैं इसका वध करना नहीं चाहता। प्राणों के साथ इसको मैं माया सरोवर ले जाना चाहता हूँ। इसीलिए मैंने इसे नहीं मारा।'' माया सरोवरेश्वर ने उत्तर दिया। कांचनमाला ने जयशील की ओर मुड़कर कहा, ''मेरे मामाजी आपकी कोई हानि करना नहीं चाहते। आप स्वेच्छापूर्वक हमारे साथ माया सरोवर क्यों नहीं चलते?''

''कांचना, इसमें मेरी इच्छा के लिए मौक़ा ही कहाँ रहा? ये सरोवरेश्वर समझते हैं कि मुझे हराकर बन्दी के रूप में ले जा रहे हैं। लेकिन अगर मैं चाहूँ तो इसी क्षण अपने कंठ में कसे इस रस्से को तलवार के एक ही वार से काट सकता हूँ।'' जयशील ने कहा।

जयशील के मुँह से ये शब्द सुनकर माया सरोवरेश्वर मकरकेतु से बोला, ''मकरकेतु, तुम इस जयशील को भागने से रोको। इस बीच मैं फंदे को थोड़ा और कसकर इसे बतला दूँगा कि ज़बर्दस्ती की मौत कैसी होती है?''

इस पर मकरकेतु ने अपने चेहरे के भाव से अपनी अनिच्छा प्रकट की। पर उसे अपने राजा के आदेश का पालन करना ज़रूरी था, इसलिए उसने अपने घोड़े को जयशील की ओर बढ़ाया। इसे देख कांचनमाला भय कंपित हो चीख़ उठी; जयशील के कंठ से लटकनेवाले रस्से को उसने अपने दोनों हाथों से कसकर पकड़ लिया, तब बोली, ''मामाजी, आप इस रस्से को खींचकर इनके कंठ को कस लेंगे तो मैं सहन नहीं कर सकती। मैं भी इनके साथ इसी रस्सी से फांसी लगाकर मर जाऊँगी।''

''उफ़ ! आश्चर्य ! कुछ ही क्षणों में यहाँ तक कहानी पहुँच गई है।'' यों कहकर सरोवरेश्वर दो-चार पल तक सर झुकाये सोचता रहा, फिर मन में सोचा-''प्रयत्न करके देखने में गलती ही क्या है?'' फिर सर उठाकर बोला, ''जयशील, तुम अपने कथनानुसार तलवार से अपने कंठ में

कसे रस्से को भले ही काट सकते हो, लेकिन इस जलग्रह से बचकर तुम भाग नहीं सकते ! यह अपने पैरों से रौंदकर दाढ़ों से वार करके तुम्हारा अंत कर सकता है।''

''अच्छी बात है ! प्रयत्न करके देखो तो सही।'' यह कहकर जयशील तलवार उठाकर रस्से को काटने को हुआ, तभी मकरकेतु धीमी आवाज़ में बोला, ''जयशील, जल्दबाजी मत करो। सरोवरेश्वर द्वारा तुमको माया सरोवर ले जाये जाने में एक रहस्य छिपा हुआ है। साथ ही तुम भी तो सरोवर पहुँचना चाहते हो न? इस मौक़े से तुम फ़ायदा उठा सकते हो !''

जयशील को लगा कि मकरकेतु उसकी भलाई के वास्ते ही ये शब्द कह रहा है। अब तक राजा कनकाक्ष के बच्चों में से कांचनमाला ही हाथ लगी है। पर राजकुमार कांचनवर्मा अभी तक माया सरोवर में बंदी है। मगर कांचनमाला अपना अपहरण करनेवाले माया सरोवरेश्वर को मामाजी कहकर आदरपूर्वक संबोधित कर रही है। इस पर जयशील को आश्चर्य के साथ संदेह भी हुआ।

यों विचार कर जयशील बोला, ''अच्छी बात है, माया सरोवरेश्वर ! यह साबित हो गया कि तुम मुझसे ज़्यादा बलवान हो, मैं तुम्हारे अधीन हो गया हूँ, पर बताओ, तुम अब मेरे साथ कैसा व्यवहार करने जा रहे हो?''

''तुम्हारे द्वारा इस प्रकार अपनी हार मानने में कोई धोखा तो नहीं है न?'' जयशील के चेहरे को परखते हुए माया सरोवरेश्वर ने पूछा।

''जो दुर्बल होता है, वह धोखे का आश्रय लेता है। लेकिन मकरकेतु अब स्वयं समझ गया होगा कि मैं कैसा व्यक्ति हूँ? क्यों मकरकेतु, मैं ठीक कह रहा हूँ न?'' जयशील ने कहा।

''मैंने इसके पूर्व ही महाराजा से इस बात का निवेदन किया है कि आप तो महासत्व की श्रेणी के हैं।'' मकरकेतु ने उत्तर दिया।

''जयशील, तुम्हारा सत्व कैसा है, यह बात मैं सरोवर में पहुँचने पर देखूँगा। फिलहाल तुम हमारे साथ चल रहे हो न?'' ये शब्द कहकर माया सरोवरेश्वर ने मकरकेतु की ओर देखा और पूछा, ''सुनो, हमने इसके पूर्व एक जलवृक राक्षस को देखा है। न मालूम बाक़ी दुष्ट वहाँ पर कैसा बीभत्स कर रहे हैं?''

''अजी, बताओ, इस वक्त मेरे कंठ में जो रस्सा कसा हुआ है, इसका उद्देश्य क्या है?''

करते आ सकते हैं?'' मकरकेतु ने इन शब्दों के साथ जयशील की ओर देखा।

''कांचना मेरे साथ जलग्रह पर सवार हो चली आयेंगी। तुम और जयशील घोड़े पर चले आओ।'' माया सरोवरेश्वर ने सुझाया।

जयशील यह समाचार सुनकर चौंक गया कि कांचनमाला फिर से सरोवर में ले जाई जा रही है। वह मकरकेतु से बोला, ''मकरकेतु ! कांचनमाला को फिर से माया सरोवर में ले जाना मैं पसंद न करूँगा। मैंने राजा कनकाक्ष को वचन दिया है कि अपहरण किये गये उनके बच्चों को शीघ्र ही लाकर सौंप दूँगा।''

माया सरोवरेश्वर ने क्रोध भरी दृष्टि से जयशील की ओर देखा। कांचनमाला भी क्रोध पूर्वक जयशील की ओर देख बोली, ''यह बात सही है कि मैं और मेरे भाई जंगल से अपहरण किये गये हैं, मगर हम किसी के बंधन में नहीं हैं। मैं अपने भाई के बिना अकेले अपने माता-पिता के पास कैसे जा सकती हूँ? आपसे बन पड़े तो मेरे भाई को आप बंधन से मुक्त कीजिए।'' यों कहकर वह तेजी के साथ जलग्रह के पास पहुँची और माया सरोवरेश्वर के हाथ का सहारा पाकर जलग्रह पर बैठ गई।

जयशील ने विस्मय में आकर पूछा, ''मकरकेतु, यह सब मुझे आश्चर्यजनक मालूम होता है। राजा के बच्चों का अपहरण करना, माया सरोवर इत्यादि बातें सब झूठ तो नहीं हैं?''

''आप इसी वक्त, घोड़े पर सवार हो जाइये;

जयशील ने पूछा। माया सरोवरेश्वर के द्वारा जवाब देने के पहले ही कांचनमाला ने मुस्कुराते हुए जयशील के कंठ से फंदा निकाला और कोमल स्वर में बोली, ''यह फांसी का फंदा नहीं, मेरे मामाजी के द्वारा आपके कंठ में पहनाई गई कमलनालों की माला है।''

''कहानी शीघ्र ही समाप्त होने जा रही है। बेचारी पद्ममुखी सब प्रकार से बदक़िस्मतवाली है। यह व्यक्ति जलवृक राजा का अंत करने में मेरी मदद करे तो मेरा बड़ा उपकार हो सकता है।'' माया सरोवरेश्वर ने अपने मन में सोचा।

''महाराज ! आदेश दीजिए, अब मैं क्या करूँ?'' मकरकेतु ने सरोवरेश्वर से पूछा।

''हम सब सरोवर में जा रहे हैं, तुम मार्ग दिखाते चलो।'' माया सरोवरेश्वर ने कहा।

''जयशील क्या पैदल ही हमारा अनुसरण

सरोवर में पहुँचने पर सारी बातें अपने आप समझ सकते हैं।'' मकरकेतु ने जवाब दिया।

जयशील चुपचाप मकरकेतु के घोड़े पर उसके पीछे जा बैठा। माया सरोवरेश्वर ने जलग्रह को हाँक दिया। वह तेजी के साथ आगे चलने लगा। उसके पीछे मकरकेतु अपने घोड़े को दौड़ाने लगा। उस वक़्त हठात् जयशील को सिद्धसाधक की याद हो आई। ''सिद्धसाधक ने भी बहुत दिन मेरे साथ जंगलों में कष्ट झेला। अचानक मेरे गायब होने पर न मालूम वह क्या समझता होगा? कहीं वह मुझे मरा हुआ न समझ बैठे?'' जयशील ने सोचा।

इधर जयशील इन्हीं विचारों में डूबा हुआ था। उधर अश्व दल का नेता वीरसेन अपने साथ सिद्धसाधक को जंगल में राजा कनकाक्ष के डेरे पर ले गया। राजा ने उसे पहचान लिया और पूछा, ''सुनो, तुम्हारे साथ बच्चों की खोज में गया जयशील नामक वह युवक कहाँ है? तुम लोग बहुत दिनों तक जब न लौटे, तब मैं अपना राज्य मंत्रियों के हाथ सौंपकर जंगलों में अपने बच्चों की खोज कर रहा हूँ।''

''महाराज! युवराज तथा युवरानी का अपहरण करनेवाले लोग माया सरोवर नामक स्थान पर निवास करनेवाले विचित्र मनुष्य हैं। ये लोग पानी में और पानी के बाहर भी यथा प्रकार जीवित रह सकते हैं। हमने उनमें से कुछ लोगों को बंदी बना रखा है। उनका राजा माया सरोवरेश्वर पहले नर भक्षी लोगों के हाथों में पड़ गया था। फिर मेरे भी हाथ फंस गया, मगर बचकर भाग गया है। फिर भी चिंता की कोई बात नहीं है। उसी माया सरोवर के एक और स्थान का निवासी जलवृक राक्षस मेरा सेवक बन गया है। इसके द्वारा हम पता लगा सकते हैं कि वह सरोवर कहाँ पर है?''

''ओह, ऐसी बात है?'' ये शब्द कहकर राजा कनकाक्ष ने पत्थरवाला गदा अपने कंधे पर रख लिया और सिद्धसाधक के पीछे खड़े जलवृक को देख पूछा, ''बताओ, जयशील कहाँ है?''

''जयशील माया सरोवर के दो राजसेवकों के साथ मिलकर हंसों के रथ पर सवार हो जंगल में उस राजा की खोज कर रहे हैं, लेकिन वे यह नहीं जानते कि माया सरोवर का राजा मेरे हाथों में आकर भाग गया है।'' सिद्धसाधक ने उत्तर दिया। ''हंसों का रथ?'' ये शब्द दुहराकर राजा कनकाक्ष और उनके कर्मचारी विस्मय में आ गये।

उसी वक़्त थोडी दूर पर पेड़ों के नीचे कोई कोलाहल प्रारंभ हुआ। वहाँ के दो सिपाहियों के साथ नर भक्षी बात कर रहे थे। वे लोग कह रहे थे कि उन्हें कोई गुप्त बात मालूम हो गई है, इसलिए उन्हें नर वानर पर सवार हो भ्रमण करनेवाले भूतों के नेता के पास ले जाया जाये!

सिपाही उनसे सहज ढंग से पूछ रहे थे, "तुम लोग कौन हो? कहाँ से आये हो?"

सिद्धसाधक ने एक राज सेवक को आदेश दिया, "तुम उस कोलाहल का पता लगाकर उन दोनों व्यक्तियों को मेरे पास लेकर आओ।"

थोडी देर में नर भक्षी सिद्धसाधक के निकट पहुँचे और उसके पैरों पर गिरकर बोले, "महानुभाव ! आप हमारे नेता और पुजारी गणाचारी को मुक्त करेंगे तो हम आपको एक बहुत ही बड़ा रहस्य बतायेंगे।"

साधक के मन में संदेह हुआ कि ये लोग किसी ज़बर्दस्त रहस्य के बारे में जानते हैं, इसलिए उसने जलवृक राक्षस को आदेश दिया कि वह घोड़ों से बंधे दो नर भक्षियों को बंधन-मुक्त करके उनके सामने हाज़िर करे। जलवृक ने जाकर शेरसिंह और गणाचारी को बंधन से मुक्त किया, दोनों को दो हाथों पर उठाये ले आया और सिद्धसाधक के सामने खड़ा कर दिया। सिद्धसाधक ने नर भक्षियों से पूछा, "बताओ, तुम कौन-सा रहस्य बताना चाहते हो?"

"भूतों के नेताजी ! आपके हाथों से बचकर भागनेवाले मगरमच्छ चेहरेवाले तथा विचित्र हाथी पर सवार हो आये हुए व्यक्ति की हम लोग खोज कर रहे थे, तब उन लोगों ने आप जैसे एक मानव और एक लडकी को देखा। हम लोग शंका कर रहे थे कि उन पर हमला करके बंदी बनाना शायद खतरनाक सिद्ध होगा, यह सोचकर पेड़ों की ओट में हम छिपे बैठे थे, तभी विचित्र हाथी वाला और मगरमच्छ चेहरेवाला उन दोनों को अपने वाहनों पर बिठाकर पहाड़ों की ओर भाग गये। एक बात और है - हंसों के रथ से उतरनेवाले कुछ लोग पूरबी दिशा में यहाँ से पाँच कोस की दूरी पर किन्हीं लोगों की खोज कर रहे हैं।" नर भक्षियों ने समझाया। *(क्रमशः)*

विद्यावान

धुन का पक्का विक्रमार्क फिर से पेड़ के पास लौट कर आया। पेड़ पर से शव को उतारा और अपने कंधे पर डाल यथावत वह श्मशान की ओर बढ़ने लगा। तब शव के अंदर के वेताल ने कहा, ''राजन्, तुम्हारे साहस और सहनशक्ति की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता। आख़िर बताओ तो सही, इतनी कड़ी मेहनत क्यों कर रहे हो? आधी रात को भयंकर जंतुओं से भरे इस श्मशान में ज़ोखिम क्यों उठा रहे हो? तुम्हें जागरुक करने के लिए अब तक मैंने कितने ही व्यक्तियों की कहानियाँ सुनायीं ! आज मैं तुम्हें गोविंद की कहानी सुनाऊँगा, जिसमें अनुशासन नाम मात्र के लिए भी नहीं था। गुरुओं

की सेवा-शुश्रूषा करके विद्या सीखने की उसमें सहनशक्ति रत्ती भर भी नहीं थी। पर हाँ, जन्म से वह प्रज्ञावान था। किन्तु किसी समस्या का सामना करते हुए वह घबरा जाता था और उसका व्यवहार अटपटा होता था। मुझे भय है कि कहीं तुम भी ऐसी ही ग़लती न कर बैठो। इसी उद्देश्य से मैं तुम्हें उसकी कहानी सुना रहा हूँ। ध्यान से सुनो।'' फिर वेताल उसकी कहानी सुनाने लगा :

गंगा तट पर कपिलपुर नामक एक गाँव में गोविंद नामक एक लड़का रहा करता था। वह बड़ा ही तेज़ व फुर्तीला था। सब लोगों का समझना था कि किसी भी प्रकार की विद्या को आसानी से सीखने की क्षमता उसमें है। बिना रुके दौड़ता हुआ वह कोसों दूर जाने की शक्ति रखता था। बाण चलाने में भी वह माहिर था। जल-प्रवाह की परवाह किये बिना नदी के पार जाने में उसे कोई दिक़्क़त नहीं होती थी। इसके अतिरिक्त करता रहता था खेत में पिता की मदद और घर के कामों में माता की भरसक सहायता।

''लड़का बड़ा ही चुस्त है। राजवर के राजशेखर के पास भेजने से इसकी बुद्धि और पैनी होगी,'' गाँव के बड़ों ने गोविंद के पिता को सलाह दी।

गोविंद ने अपने पिता से पूछा, ''ये राजशेखर कौन हैं?'' ''राजशेखर समस्त विद्याओं में निष्णात हैं। उनसे जो विद्याएँ सीखता है, वह राजा बनने योग्य हो जाता है।'' गोविंद के पिता ने कहा।

''अगर उनमें इतना ज्ञान और प्रतिभा है तो वे स्वयं राजा क्यों नहीं बन जाते?'' गोविंद ने लापरवाही के स्वर में कहा।

''ऐसी बातें मत करो। राजशेखर अगर चाहते तो बहुत पहले ही राजा हो जाते। उनका मानना है कि विद्या-दान उनका धर्म है और वे इस धर्म को बड़ी ही निष्ठा के साथ निभाते हैं। साथ ही समय-समय पर नयी-नयी बातों को सीखने से भी वे नहीं झिझकते। सबका यही कहना है कि राजशेखर की बराबरी का कोई है तो स्वयं राजशेखर हैं। मेरी राय है कि कुछ समय तक तुम उनका शिष्य बनो और उनसे विद्याएँ सीखो।'' गोविंद के पिता ने उसे समझाया।

गोविंद को पिता की बातें नहीं जंचीं। उसने कह दिया, ''जीवन का लक्ष्य क्या कुछ विद्याओं को सीखना मात्र है? आराम से ज़िन्दगी काटने

के लिए धन चाहिए। यथासाध्य दूसरों की मदद करनी चाहिए। जीवन भर विद्याएँ सीखते रहने में मुझे कोई रुचि नहीं है।''

''सीखने की शक्ति व सामर्थ्य जो रखता है, वह जीवन भर सीखता ही रहे तो इसमें कोई ग़लती नहीं है। इसका निर्णय तुम खुद कर लो कि वह शक्ति व सामर्थ्य तुममें है या नहीं।'' इतना कहकर गोविंद का पिता चुप रह गया।

गोविंद में आक्रोश भर आया। उसमें पौरुष जागा। उसका आत्मविश्वास था कि किसी भी विषय में वह राजशेखर से कम नहीं है। उसे लगा कि ऐसी स्थिति में राजशेखर का शिष्य क्यों बनूँ?

गोविंद ने सोचा कि उसकी महानता को गाँव के लोग तभी स्वीकार करेंगे, जब ऐसी कोई विद्या वह सीखे, जो राजशेखर नहीं जानते। इसलिए उसे लगा कि कोई नयी विद्या ढूँढ़ निकालनी चाहिए। तब से वह अपने आसपास की जगहों को ग़ौर से देखने लगा। उस समय एक विचित्र घटना घटी।

गोविंद के गाँव के निकट ही आम का एक बग़ीचा था। उस आम के बग़ीचे के बीचोबीच एक पेड़ था, जो बिलकुल आम का पेड़ जैसा ही लगता था। पर उसके फल देखने में बेर जैसे लगते थे और करेला की तरह कड़वे थे।

गोविंद ने एक दिन एक बंदर को आम के बग़ीचे में प्रवेश करते हुए देखा। गोविंद ने उसका पीछा किया। बीच के पेड़ तक आकर बंदर हाँफता हुआ रुक गया। फिर उसने पेड़ का एक फल खा लिया। बस, उसमें दुगुना उत्साह भर
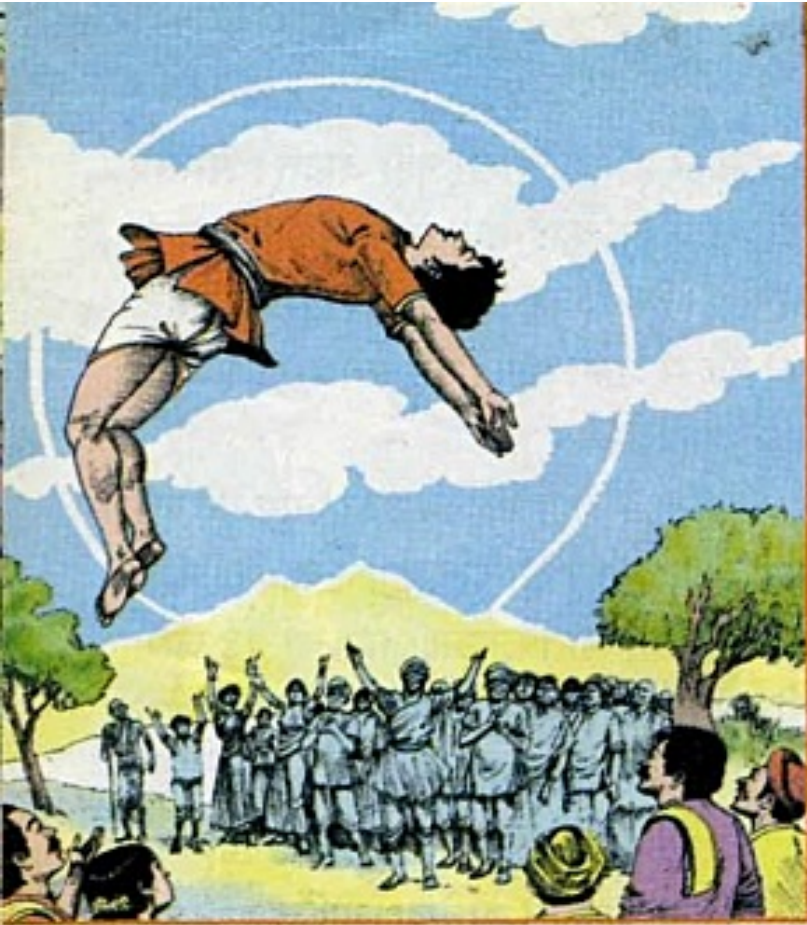
आया और उछलता-उड़ता हुआ आँखों से ओझल हो गया। तब तक चौकीदार भी वहाँ आ चुके थे। इस दृश्य को देखकर उन्हें लगा कि वह बंदर नहीं, स्वयं हनुमान हैं। इसलिए वे आँखें बंद करके श्रद्धापूर्वक प्रणाम करने लगे।

पर गोविंद ने ऐसा नहीं किया। उसने इसे तर्क की कसौटी पर परखा। उसे लगा कि उस पेड़ के फल में अवश्य ही कोई महिमा है। कड़वा होते हुए भी उसने उस पेड़ का फल खाया। उसमें कोई नयी शक्ति आ गयी, पर कोशिश करने के बाद भी वह ऊँचाई तक उड़ नहीं पाया। उसने यही प्रयत्न थोड़े समय तक जारी रखा। पर वह थक गया और हाँफने लगा।

गोविंद को अकस्मात् याद आया कि जब बंदर हाँफ रहा था तब उसने उस पेड़ का फल खाया और छलांग मारकर रफूचक्कर हो गया। उसने भी तुरंत पेड़ से एक फल तोड़ा और खा लिया। दूसरे ही क्षण वह अपने को हल्का महसूस करने लगा। उसने उड़ने की कोशिश की और काफी ऊँचाई तक उड़नै में वह सफल भी हुआ।

गोविंद खुशी से फूला न समाया। मानव होते हुए बंदर से भी अधिक दूरी तक कूदने की कला अब वह सीख गया। उसे लगा शायद हनुमान ने भी ऐसा ही फल खाकर समुद्र पार किया होगा।

गोविंद अब अपनी विद्या का प्रदर्शन गाँव में करने लगा। उसने बग़ीचे के फल के बारे में किसी को नहीं बताया। उसे उड़ता हुआ और कूदता हुआ देखकर लोग खुशी के मारे तालियाँ बजाने लगे। उसके इस अद्‌भुत प्रदर्शन को देखने के लिए बाहर के गाँवों से भी लोगों की भीड़ आने लगी।

एक दिन गोविंद ने अपने पिता से कहा, ''मैंने कम समय में अपनी पूरी शक्ति लगाकर यह नयी विद्या सीखी। मैं नहीं समझता कि राजशेखर इस विद्या से परिचित हैं। इसलिए आगे से उनका शिष्य बनने के लिए मुझपर दबाव मत डालिये।''

गोविंद नयी विद्या सीखने पर खुश तो था ही पर उसे इस बात की अधिक खुशी थी कि उसने ऐसी विद्या सीखी, जो राजशेखर नहीं जानते। एक दिन एक बुजुर्ग उस गाँव में आये। वे गोविंद के बारे में पूछ-ताछ करने लगे।

गोविंद ने अपना परिचय खुद देते हुए उनसे पूछा, ''महाशय, जान सकता हूँ, आप कौन हैं?''

"मुझे राजशेखर कहते हैं। जो विद्या आप प्रदर्शित कर रहे हैं, वही विद्या सीखने और आपका शिष्य बनने आया हूँ।" उस बुजुर्ग ने कहा।

गोविंद ने सकपकाते हुए कहा, "आप राजशेखर हैं! कहते हैं कि आप समस्त विद्याओं में पारंगत हैं। जब आप इतनी विद्याओं में निष्णात हैं, तब नयी विद्या सीखने की क्या ज़रूरत है? इसी अहंभाव को संतुष्ट करने आये हैं न कि कोई ऐसी विद्या नहीं, जिसे मैं नहीं जानता।" "पुत्र, मुझमें अहंकार होता तो आपका शिष्य बनने यहाँ क्यों आता?" राजशेखर ने कहा।

गोविंद, राजशेखर के जवाब से संतुष्ट नहीं हुआ। उसने कहा, "आप भी विनोद भरे ये प्रदर्शन देकर धन कमाना चाहते हैं?"

"विद्यावान को धन का मोह नहीं होता। मैंने अपने लिए विद्याएँ नहीं सीखीं। अपने ज्ञान को भविष्य की पीढ़ियों में बाँटने के उद्देश्य से सभी विद्याओं से संबंधित ग्रंथ भी लिख रहा हूँ। हमारा ज्ञान हम तक ही सीमित न हो, उसका अंत न हो जाए, इसलिए यह सावधानी बरत रहा हूँ," राजशेखर ने कहा।

इस पर गोविंद ने ताना कसते हुए कहा, "महोदय, मेरी विद्या से मानव भी बंदर की तरह उछल सकता है। इस विद्या का अंत मेरे ही साथ-साथ हो जाए तो संसार को इससे क्या कोई हानि पहुँचेगी?"

"हाँ, होगी। मछली जल में तैरती है। भूमि पर आ जाने पर वह छटपटाती हुई मर जाती है। हिमालय के रीछ, रेगिस्तान में क्षण भर भी नहीं रह सकते। परंतु मानव की ऐसी बात नहीं है। उसे पानी में तैरना है, हवा में उड़ना है। वातावरण के सभी खतरों का उसे सामना करना है, सहना है। इसीलिए भगवान ने मानव को बुद्धि दी। अब आप ही की विद्या की बात लीजिए। इसकी सहायता से नदी पार कर सकते हैं, अग्नि ज्वालाओं में फंस जाएँ तो अपनी रक्षा कर सकते हैं।" राजशेखर ने विस्तारपूर्वक समझाया।

राजशेखर की ये बातें सुनते ही गोविंद ने दोनों हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम करते हुए कहा, "मुझे क्षमा कीजिए। मैं आपका शिष्य बनूँगा और अपना ज्ञान बढ़ाऊँगा। फिर जिस विद्या का मुझे ज्ञान है, वह विद्या गुरुदक्षिणा के रूप में

आपको समर्पित करूँगा। अपना शिष्य बनाकर मुझे धन्य कीजिए।''

वेताल ने पूरी कहानी सुनाने के बाद विक्रमार्क से पूछा, ''राजन्, गोविंद न ही किसी गुरु का शिष्य बना, न ही किसी गुरु की सेवा-शुश्रूषा की। उसने अपनी प्रज्ञा, प्रतिभा व बुद्धि बल के आधार पर एक असाधारण विद्या सीखी। राजशेखर ने उस विद्या का महत्व उसे समझाया। फिर भी उसने अपनी विशिष्टता भुला दी; माफ़ी माँगी और अपना शिष्य बनाने के लिए उनसे गिड़गिड़ाया। यह क्या अनुचित, असंगत, अनावश्यक व अविवेकपूर्ण नहीं लगता? उसने जो नयी विद्या सीखी, तद्वारा वह यह साबित भी कर सकता था कि वह राजशेखर की बराबरी का है। ऐसे सुवर्ण अवसर को उसने अपने हाथों से जाने दिया। मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए चुप रह जाओगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।''

विक्रमार्क ने कहा, ''गोविंद अहंकारी है, यह स्पष्ट प्रमाणित हो जाता है, प्रारंभ में पिता को दिये गये उसके उत्तरों से। फिर बाद की उसकी व्यवहार-शैली-से भी यह स्पष्ट गोचर होता है। परंतु अपने प्रश्नों के उत्तरों को राजशेखर के मुँह से सुनकर उसे ज्ञात हो गया कि वह किसी एक ही नयी विद्या में विद्यावान मात्र है। वह तेज़ और चुस्त है। तर्क की कसौटी पर परखने की उसमें मेधाशक्ति है। इसी कारण वह जान भी पाया कि उसमें अहंकार की मात्रा आवश्यकता से अधिक है, और जो विद्या वह जानता है, उसकी दृष्टि में वही सब कुछ है। राजशेखर ऐसी श्रेणी में नहीं आता। वह विद्यावान व पंडितों के स्तर से कहीं अधिक है। वह ज्ञानी है, योगी है। गोविंद ने इस सत्य को जानकर उससे क्षमा माँगी। यह कदापि असंगत, अनावश्यक, और अविवेकपूर्ण नहीं है।''

राजा के मौन-भंग में सफल वेताल शव सहित ग़ायब हो गया और फिर से पेड़ पर जा बैठा।

(आधार कल्पना राय की रचना)

असली बात यही है !

लक्ष्मीपति और गौरीपति अड़ोस-पड़ोस में रहनेवाले गृहस्थ हैं। लक्ष्मीपति धनाढ्य है। उसे किसी बात की चिंता नहीं। जीवन आराम से गुजर रहा है। पर गौरीपति ग़रीब है। परिवार भी बड़ा है। वह हमेशा अस्वस्थ रहता है। पर इतनी तक़लीफों व बाधाओं के होते हुए भी वह हर साल अपना जन्म-दिन मनाता है। जाने-पहचाने लोगों में मिठाइयाँ भी बाँटता है।

एक बार गौरीपति अपने जन्म-दिन के अवसर पर जब मिठाइयाँ बाँटने लगा, तब उसी की गली में रहनेवाले रामावतार ने कहा, "गौरीपति, मेरा एक संदेह है। पूछूँ तो बुरा नहीं मानोगे न?"

गौरीपति ने कहा, "पूछिये। भला बुरा क्यों मानूँ?"

"तुम्हारा पड़ोसी लक्ष्मीपति स्वस्थ है और धनी भी। परंतु आज तक सुनने में नहीं आया कि उसने कभी अपना जन्म-दिन मनाया। तुम्हारी ज़िन्दगी तो कष्टों से भरी पड़ी है, फिर भी हर साल अपना जन्म-दिन खुशी-खुशी मनाते हो। यह मुझे बड़ा ही विचित्र लगता है," रामावतार ने पूछा।

उसके इस सवाल पर मुस्कुराते हुए गौरीपति ने कहा, "इसमें विचित्रता की क्या बात है? लक्ष्मीपति अपना जन्म-दिन नहीं मनाता, क्योंकि उसे इस बात की चिंता है कि आराम से कटते जा रहे उसके जीवन में एक साल घट गया। अब रही मेरी बात। मेरा जीवन कष्टों से लबालब भरा हुआ है। मुझे इस बात की खुशी है कि मेरे ऐसे जीवन का एक साल घट गया। इसी खुशी में मैं हर साल जन्म-दिन मनाता हूँ। असली बात यही है !"

- *करुणाकर*

भारत की पौराणिक कथाएँ – १५

तेज़ तीर्थयात्री

साधु बाबा एक भिक्षु संन्यासी थे और निरन्तर तीर्थयात्रा करते रहते थे। जब भी कहीं तीर्थ के लिए वे जाते तो मार्ग में एक-दो दिन के लिए श्यामपुर गाँव में रुक जाया करते थे। वे लटकानेवाले झोले में एक जोड़ी कपड़ा और एक कमण्डल के अलावा साथ में लगभग कुछ नहीं ले जाते। सामान्य तौर पर घुमन्तु तीर्थ यात्रियों को खिलानेवाले लोग मिल जाते थे। लेकिन साधु बाबा को इनके भक्तों से कुछ नकदी भी मिल जाती थी जिससे जरूरत पड़ने पर वे भोजन खरीद सकते थे।

यदि साधु बाबा को किसी निकटवर्ती तीर्थस्थान पर जाना होता तो दो-तीन ग्रामीण उनके साथ हो लेते। ''क्या साधु बाबा जैसे संत की संगति में तीर्थ स्थान की यात्रा करना सौभाग्य की बात नहीं है?'' वे सोचते। साधु बाबा की रोचक कहानियों से उनकी लम्बी यात्रा की थकान दूर हो जाती। अधिकतर स्थानों पर साधु बाबा के मित्र या शुभचिन्तक मिल जाते। वे उन्हें और उनके साथियों को पौष्टिक भोजन खिलाते और उनके ठहरने के लिए आरामदायक स्थान का इन्तजाम करते।

लालू सेठ श्यामपुर का सबसे धनी व्यक्ति था। वह महाजनी और व्यापार करता था। यह बात दूसरी थी कि वह उस इलाके का सबसे बड़ा कंजूस और लालची भी था। एक बार श्यामपुर में कुछ दिन रुकने के बाद जब साधु बाबा जगन्नाथ धाम पुरी जाने लगे तब दो अन्य ग्रामीणों के साथ लालू सेठ भी जाने को तैयार हो गया। बाबा ने लालू से

कहा, "तुम अभी बूढ़े तो हुए नहीं। तीर्थयात्रा पर जाने की इतनी जल्दी क्या है?"

"लेकिन बाबा, आप तो बूढ़े होते जा रहे हैं। यदि मैं अभी आपके साथ न चलूँ तो आप के सत्संग का लाभ शायद मुझे कभी न मिले !" लालू सेठ ने कहा।

साधु बाबा लोगों के मन की बातों को ताड़ जाते थे। उन्होंने देखा कि लालू तीर्थयात्रा द्वारा जहाँ एक ओर भक्ति प्राप्त करना चाहता था, वहीं दूसरी ओर यात्रा के दौरान भोजन और आवास मुफ्त में लेने की कोशिश करता था। वह प्रभावशाली भी था। ग्रामीण उसके प्रति आदर भाव के कारण उसका सामान ढोने लगते थे।

फिर भी साधु बाबा उसे हतोत्साहित करते। "देखो सेठ, तीर्थ स्थानों में जाने मात्र से कोई लाभ नहीं होता। सांसारिक लगावों से मुक्त होने की जरूरत है। तीर्थयात्रा के दौरान किसी को लाभ-हानि की बात नहीं सोचना चाहिए। तुम क्या समझते हो कि तुम सभी चिन्ताओं से अपने मन को मुक्त रख सकते हो?"

"साधु बाबा, मैं महीने भर के लिए घर से दूर क्यों रहना चाहता हूँ। इसका एक कारण यह है कि मैं देखना चाहता हूँ मेरी पत्नी और बच्चे मेरी गैरहाजिरी में व्यापार को कैसे संभालते हैं?" लालू सेठ ने दबी हँसी के साथ कहा।

"ओह ! तो तुम्हारी बहूद्देश्यीय योजना है यह, मात्र तीर्थयात्रा नहीं।" साधु बाबा ने टिप्पणी की। उन्होंने कुछ और अधिक नहीं कहा। जैसी कि आशा थी, लालू सेठ भी अन्य दो ग्रामीणों की तरह साधु बाबा के साथ चल पड़ा।
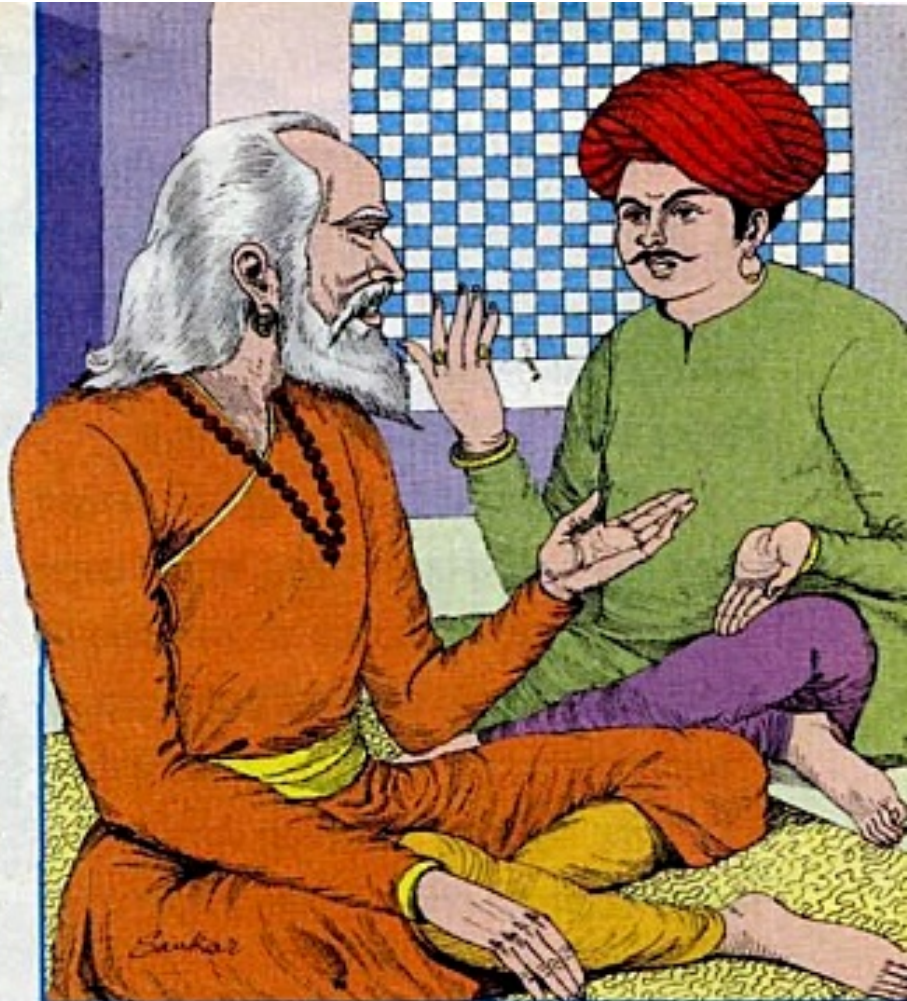
लालू आराम से पैदल चलता रहा जबकि दोनों ग्रामीण इसका सामान लेकर चल रहे थे। जब भी साधु बाबा का दल किसी मंदिर के प्रांगण में अथवा किसी गृहस्थ के घर में आराम के लिए रुकता तो लालू चुपचाप निकट के किसी बाजार में खिसक जाता करता। रास्ते में साधु बाबा द्वारा कही गई कहानियों पर उसका ध्यान नहीं रहता जबकि अन्य दोनों साथी उनमें खो जाते।

दोपहर के बाद आसमान में बादल भर गये। वे एक बाढ़ से उमड़ती नदी के किनारे-किनारे चल रहे थे। दूर के कुछ गाँवों में संभवतः पानी भर गया था, क्योंकि उन लोगों ने देखा कि नदी की तेज धारा में अनेक वस्तुएँ बहकर जा रही थीं।

"वह क्या है? कम्बल !" बीच धारा में बहती हुई किसी चीज़ की ओर उंगली से इशारा करता हुआ विस्मय से लालू बोला। "हाँ, लगता तो कंबल है, लेकिन बदली के कारण साफ नहीं दिखाई दे रहा है," एक ग्रामीण ने कहा।

"और तेजी से चलें ताके अंधेरा होने से पहले अगले गाँव में पहुँच जायें," साधु बाबा ने कहा।

"ठहर जाइये, उस कम्बल को लेने दीजिए !" चिन्तित लालू ने कहा। उसने एक ग्रामीण से कहा, "क्या तुम तैरकर उस कम्बल को ला सकते हो?"

"ओह, नहीं सेठ, मैं अच्छा तैराक नहीं हूँ कि उग्र नदी में कूद सकूं," ग्रामीण ने माफी माँगते हुए कहा।

"वर्षों पहले मैं तैरता था, यह सच है, परंतु एक बार तैरना आ जाये तो उसे भूल नहीं सकता," लालू ने कहा। वह अपनी कमीज निकालने लगा।

"लेकिन सेठ, तुम्हें उस कम्बल के पीछे पड़ने की क्या जरूरत है? तुम तो तीर्थयात्रा कर रहे हो ! तुम्हें इन छोटी-छोटी बातों को भूलकर भगवान का स्मरण करना चाहिए।" साधु बाबा ने याद दिलाया।

"साधु बाबा, उस कीमती चीज़ को बह जाने देना मूर्खता कहलायेगी," लालू ने कहा। इतना कहकर वह साधु बाबा के मना करते-करते नदी में कूद पड़ा। कुछ फुर्तीले कदमों के बाद वह उस वस्तु तक पहुँच गया और उसे पकड़ने की कोशिश की। लेकिन उसके बाद वस्तु के साथ वह भी धारा में बहने लगा।

"क्या बात है? यदि कम्बल को किनारे तक नहीं ला सकते तो उसे छोड़कर वापस आ जाओ," साधु बाबा चिल्ला कर बोले।

"मैंने पहले ही कम्बल को छोड़ दिया है, किन्तु कम्बल हमें नहीं छोड़ रहा है !" सेठ ने टूटती आवाज में कहा। उसके बाद उसके विषय में कुछ भी पता न चला। यह शीघ्र ही स्पष्ट हो गया कि वह कम्बल नहीं बल्कि भालू था ! वह किसी तरह नदी में गिर पड़ा था और धारा में बहता जा रहा था। जब लालू को उसने एक बार पकड़ लिया, तो फिर उसे छोड़ देना उसे अच्छा न लगा।

पंचांग का जन्मस्थान

दिल्ली में जन्तर-मन्तर एक प्रसिद्ध सीमाचिह्न है। जो भी हो, मौलिक जन्तर-मन्तर जयपुर में लगभग २५० वर्ष पूर्व राजा सवाई जयसिंह द्वारा निर्मित किया गया था। जयपुर वेधशाला में अनेक प्रस्तर यन्त्र हैं जो समय और आसमान के नक्षत्रों और ग्रहों की गति के बारे में सब कुछ बताते हैं। यह वेधशाला अभी भी भारत के सभी खगोल वैज्ञानिकों की वार्षिक बैठक का स्थल है जब वे पंचांग या भारतीय जंतरी बनाते हैं। पंचांग बनाते समय वे यंत्रों का सदुपयोग करते हैं।

लाइसेंस से छूट

देश के किसी भाग में आग्नेय अस्त्र रखने के लिए हरेक को लाइसेंस की जरूरत होती है। लेकिन कूर्ग में नहीं। अब कर्नाटक का एक ज़िला कूर्ग कभी कोडागु के नाम से जाना जाता था और एक स्वतंत्र साम्राज्य था। युद्धप्रिय कुर्गी लोगों से अंगरेजी शासक डरते थे। उन्होंने स्थानीय लोगों को लाइसेंस के बिना आग्नेय शस्त्र रखने की अनुमति दे दी। कुर्ग के लोग अभी भी उस सुविधा का लाभ उठा रहे हैं। भारत के कुछ सेनाध्यक्ष कुर्ग के रहनेवाले थे। जैसे फिल्ड मार्शल के.एम. करियप्पा जो इस पद तक पहुँचनेवाले पहले भारतीय थे तथा जनरल थिमैय्या।
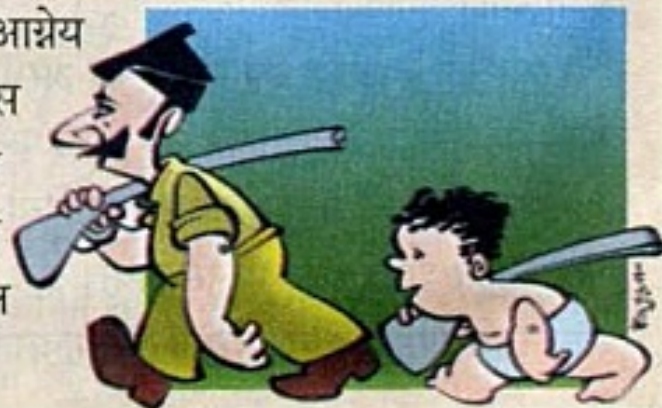
माँ-बेटा

जब विजय दो साल का था, तभी उसके पिता की मौत हो गयी। उसकी माँ सरस्वती बड़े ही लाड़-प्यार से उसे पालने-पोसने लगी। जब वह पाँच साल का हो गया तब उसने उसे उसी गाँव के महापंडित विष्णु शर्मा के पास विद्याभ्यास के लिए भेजा। पाँच साल तक शिक्षा पाने के बाद वह पढ़ाई से ऊब गया। उसने माँ से कहा, ''माँ, तुम्हें इस तरह कड़ी मेहनत करते हुए देख नहीं सकता। शिक्षा पाने मात्र से हमारा पेट नहीं भरता। मैं भी तुम्हारी तरह काम करूँगा और थोड़ा-बहुत कमाऊँगा।''

सरस्वती ने उसके इस विचार को अस्वीकार करते हुए कहा, ''बेटे, तेरी यह उम्र शिक्षा पाने की है। विष्णु शर्मा जी ने तुम्हें अक्षर ज्ञान दिया और थोड़ा-बहुत शास्त्र ज्ञान भी सिखाया। इन्हें और सीखने की तुम्हारी इच्छा नहीं है तो व्यावसायिक विद्याएँ सीखो। अभी से तुम कमाई पर ध्यान देने लगोगे तो जीवन में कुछ नहीं बन पाओगे।''

विजय माँ की बात को टाल नहीं सका। उसने चंद विशेषज्ञों का आश्रय लिया, उनकी सेवा-शुश्रूषा की और पाँच साल के अंदर ही कुछ व्यवसायों में कुशलता पा ली। उसकी तीक्ष्ण बुद्धि और फुर्तीलेपन से आकर्षित एक शिल्पी ने उससे कहा, ''लोकप्रिय शिल्प तुम तराश सकते हो। यदि यह विद्या सीखोगे तो भविष्य में तुम भी महान शिल्पी बनोगे। धन कमाओगे और नाम भी।''

विजय ने यह बात माँ से बतायी और कहा, ''यह अच्छा मौक़ा है। तुम्हें छोड़कर जाना मुझे पसंद नहीं है, पर मजबूर हूँ।''

सरस्वती ने बेटे को समझाते हुए कहा, ''तुम्हारा मेरे पास रहना ज़रूरी है। धन से मुझे कुछ लेना-देना नहीं है। तुममें योग्यता होगी तो

- रमेश राठी -

अवसर तुम्हें ढूँढ़ता आयेगा। गाँव को छोड़कर जाने का विचार छोड़ दो।''

विजय को माँ की बात माननी पड़ी। और पाँच सालों तक व्यावसायिक विद्याएँ सीखने में उसने कड़ी मेहनत की और अब उनमें दक्ष बन गया। परंतु उसे कभी-कभी लगता था कि माँ के कारण उसने एक बढ़िया मौक़ा खो दिया।

उस दौरान धनवर्मा नामक एक व्यापारी उस गाँव में मूंगफली खरीदने आया। वह गाँव बढ़िया मूंगफली के लिए मशहूर था। संयोगवश उसकी मुलाक़ात विजय से हुई। विजय से इधर-उधर की बातें करने के बाद उसे लगा कि यह युवक बड़ा बुद्धिमान है। उसने विजय से कहा, ''बेटे, तुम अक़्लमंद हो, तेज़ हो। मुझे बहुत अच्छे लगे। अपनी बेटी स्वर्णमुखी के लिए एक योग्य वर की खोज में हूँ। तुम मान जाओगे तो उसकी शादी तुमसे कराऊँगा और फिर अपना पूरा व्यापार तुम्हारे सुपुर्द कर दूँगा।''

धनवर्मा का प्रस्ताव सुनकर वह सोचने लगा, ''ऐसा हो जाए तो मेरा जीवन बदल जायेगा। संपत्ति का स्वामी भी बनूँगा और सुखपूर्वक जीवन भी बिता पाऊँगा।'' वह धनवर्मा के साथ उसके गाँव गया और स्वर्णमुखी को देखकर दंग रह गया। वह बदसूरत थी, इतनी बदसूरत कि उसे क्षण भर के लिए भी देखना मुश्किल था।

''मेरी बेटी तुम्हें अच्छी लगी तो मुहूर्त जल्द निकलवाऊँगा।'' धनवर्मा ने विजय से कहा।

विजय ने घबराहट भरे स्वर में कहा, ''महाशय,
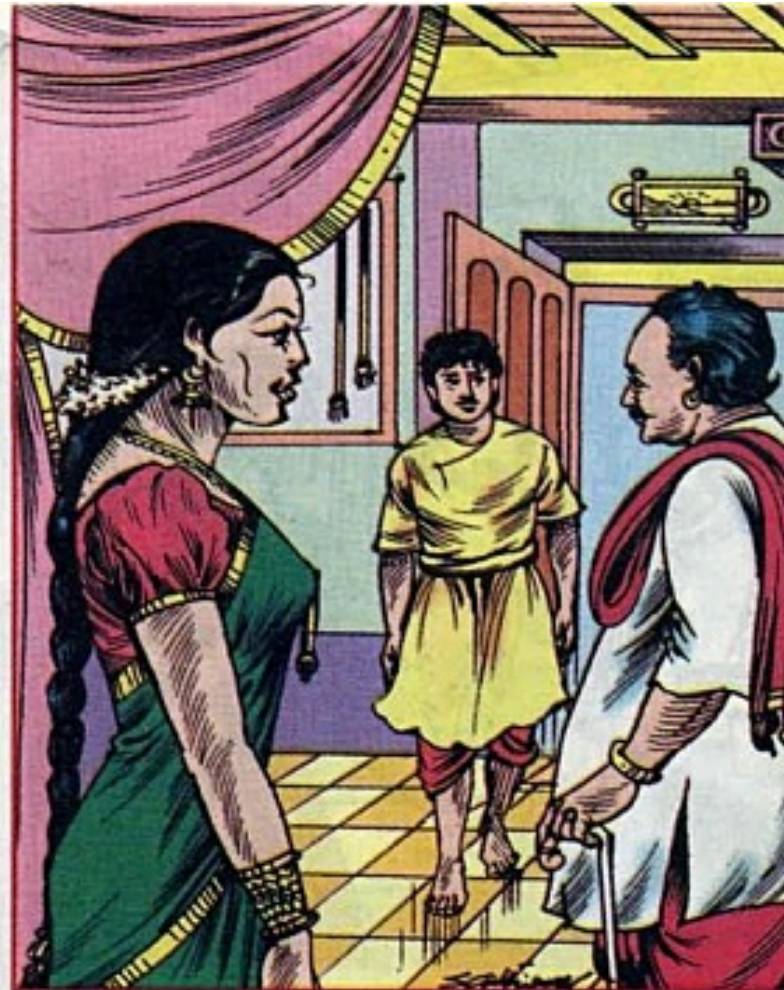
बचपन में ही मेरे पिता गुज़र गये। मेरी माँ ने अनेक कष्ट झेलकर मुझे पाला-पोसा और बड़ा किया। मेरी माँ को जो पसंद है, मैं वही करता हूँ। उनसे बताकर सूचित करूँगा।''

गाँव लौट कर विजय ने माँ से पूरा विषय बताया और कहा, ''माँ, देखने में वह लड़की बड़ी बदसूरत है। मैं उससे शादी करूँगा तो पूरा व्यापार मुझे ही संभालना पड़ेगा। सुना है कि व्यापार धोखाधड़ी का दूसरा नाम है। मुझे व्यापार से चिढ़ है। फिर भी उस लड़की से शादी कर मैं व्यापारी बनना चाहता हूँ। इसलिए इस शादी के लिए अनुमति दोगी तो मुझे बड़ी खुशी होगी।''

सरस्वती ने अपना निर्णय सुनाते हुए कहा, ''तुम जो भी चाहो, करो। पर, मेरी बड़ी इच्छा है कि मेरी बहू सुंदर और सुशील हो।''

इसके कुछ महीनों के बाद विजय की शादी राधा से पक्की हो गयी। बड़ी ही सुंदर थी वह। परन्तु दहेज लाने की उसकी स्थिति नहीं थी। जब वह उधेड़बुन में पड़ गया कि शादी करूँ या नहीं, तो उसकी माँ ने उसे समझाया-बुझाया और शादी करा दी।

कुछ दिनों तक विजय की ज़िन्दगी आराम से गुज़री। राधा अपने साथ धन नहीं लायी थी, पर उसे धन से बड़ा मोह था। वह हर दिन रेशमी साड़ियाँ लाने और गहने खरीदने के लिए विजय को तंग करने लगी। विजय से यह सहा नहीं गया। उसने माँ से कहा, ''संपन्न घर की लड़की से मैंने ब्याह करना चाहा तो तुमने मना कर दिया। यह गरीब घर की लड़की मेरी जान खाने लगी है। तुम ही बताओ, मैं क्या करूँ।''

सरस्वती ने राधा से इस संबंध में बातें कीं तो वह कहने लगी, ''मानती हूँ कि मनुष्य में तृप्ति होनी चाहिए, पर यह तृप्ति निकम्मेपन के कारण न हो। आपका बेटा कितनी ही विद्याएँ, कितने ही हुनर जानता है। शहर जाने पर उन्हें कोई अच्छी नौकरी मिल सकती है। खूब कमा सकते हैं। उनकी विद्याएँ, उनकी क्षमताएँ काम में आयें, इसी के लिए मैं उनपर दबाव डाल रही हूँ।''

सरस्वती को राधा की बातें सही लगीं। उसने बेटे और बहू को शहर जाने के लिए प्रोत्साहित किया। उन दोनों ने सरस्वती को अपने साथ आने की जिद की। सरस्वती ने इसे इनकार करते हुए कहा, ''मेरे कंधों में अब भी ताक़त है। गाँव में काम की कोई कमी नहीं। शहर में जाकर तुम लोग जब कमाने लगोगे, तब मैं ज़रूर तुम लोगों के साथ रहूँगी। तुम दोनों के सिवा मेरे और कौन हैं?''

न चाहते हुए भी विजय पत्नी को लेकर शहर गया। पर उसे वहाँ कोई काम नहीं मिला। राधा ने उसकी असमर्थता पर ताने कसे, कोसा। विजय ने निराश होकर कहा, ''ठीक है, मैं मानता हूँ कि मैं असमर्थ हूँ। तुम्हीं कोई सलाह दो। मैं उसका अक्षरशः पालन करूँगा।''

''मैं औरत हूँ। भला मैं क्या सलाह दूँ? मुझसे सलाह माँगनेवाले तुमसे मेरा लक्ष्य पूरा नहीं होगा। हम सास के पास लौट चलेंगे। पत्नी की सलाह माँगनेवाला अगर माता के आश्रय में रहना चाहता हो तो इसमें कोई ग़लती नहीं।'' उसने कडुवे स्वर में कहा।

उसकी इन बातों से भी विजय में पौरुष नहीं जगा। वह माँ के पास जाने के लिए तैयार था। पर अचानक बीमार पड़ गया। वैद्य परीक्षा करने के बाद कुछ दवाएँ देकर चला गया। पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ।'' जब तक इस बीमारी से तुम मुक्त नहीं होओगे तब तक हम गाँव भी नहीं जा सकते। बीमारी की हालत में इतनी लंबी यात्रा करना भी ठीक नहीं होगा।'' यों राधा उस पर नाराज़ होती हुई बोली।

''वैद्य चाहे हमें जाने से मना करे, हम गाँव अवश्य जायेंगे। माँ के पास रहूँगा तो यह बीमारी आप ही आप दूर हो जायेगी,'' विजय ने कहा।

राधा ने यह बात वैद्य से कही। उसने खूब सोचने के बाद कहा, ''देखो बेटी, बच्चों के शारीरिक तत्वों के बारे में माँ जितना जानती है, वैद्य भी उतना नहीं जानता। मैंने जो दवाएँ दीं, अच्छी हैं, असरदार हैं। परंतु उनका इसपर कोई असर नहीं पड़ा। इसका अवश्य ही कोई कारण होगा। यह इसकी माँ ही जानती है। इस स्थिति में इसे गाँव ले जाना भी ठीक नहीं होगा, अच्छा यही होगा कि इसकी माँ को ही यहाँ बुला लिया जाए।''

राधा ने वैद्य की सलाह का पालन किया। दो दिनों में सरस्वती वहाँ आ गयी। माँ को देखते ही विजय की आँखों में आँसू भर आये। उसने कहा, ''माँ, तुम्हारे पास न होने से सब कुछ खाली-ख़ाली लगता है, खोया-खोया सा लगता है। जैसे ही बीमारी से मैं छूट जाऊँगा, तुम्हें मेरे लिए उर्द की पीठी से बना बड़ा बनाना होगा। तुम्हारे हाथ से बनाये बड़ा खाने की मेरी बड़ी इच्छा है।''

सरस्वती के आने के चार-पाँच दिनों में ही विजय की तबीयत में सुधार आया। तब उसने वैद्य से कहा, ''मेरा बेटा बड़ा खाने की जिद कर रहा है। क्या खिला सकती हूँ?''

''तुम्हारे बेटे को एक और महीने तक ऐसे पकवान खिलाना नहीं चाहिए।'' वैद्य ने कहा। वैद्य की ये बातें विजय ने भी सुन लीं।

पर सरस्वती ने वैद्य की बातों की परवाह नहीं की और बड़ा पकाकर उसे खिला दिया। विजय ने माँ पर झल्लाते हुए कहा, ''तुम जानती हो न, वैद्य ने क्या कहा, 'क्या तुम मुझे ज़िन्दा देखना नहीं चाहती' जो ये बड़ा बनाया?''

''मुझे तुम्हारे शरीर के तत्व के बारे में बखूबी मालूम है। तुम चुपचाप बड़ा खा लो।'' कहते हुए माँ ने उसे बड़ा खिलाया।

राधा अंदर ही अंदर डर रही थी कि इससे पति पर क्या बीतेगा, पर देखते-देखते विजय जल्दी ही ठीक हो गया। राधा ने आश्चर्य प्रकट करते हुए सास से कहा, ''माँ जी, वैद्य के मना करने के बाद भी आपने बेटे को बड़ा खिलाया और जल्दी ही इनकी तबीयत ठीक हो गयी। यह तो बड़े आश्चर्य की बात है।''

इस पर सरस्वती हँस पड़ी और बोली, ''अपने बेटे के बारे में मैं बखूबी जानती हूँ। वह अपने मन की बात छिपाता है। वह नहीं चाहता कि ग़लती के लिए उसे जिम्मेदार ठहराया जाए, इसलिए मेरी आज्ञा के पालन का नाटक करता है। उसे जो पसंद है, वही बात मैं भी कहती हूँ। इसलिए मेरी राय का वह विरोध नहीं करता। मन को अच्छा लगनेवाला काम संतोष देता है। संतोष दवाओं से बढ़कर होता है।''

इन बातों से राधा की आँखें खुल गयीं। उसने सरस्वती के पैर छूते हुए कहा, ''मुझे अब मेरी कमी का ज्ञान हो गया। मैं जान गयी कि उनका सामर्थ्य, उनके कौशल तभी सफल होंगे, जब मैं अपने आपको उनकी त्रुटियों का जिम्मेदार मानूँ। और यह तभी संभव होगा, जब जन्म देनेवाली माँ की तरह मैं उनका आदर करूँ, उनपर अपना प्रेम बरसाऊँ। इनके लिए आवश्यक पाठ आप ही से सीखूँगी। आपको हमेशा के लिए हमारे ही साथ रहना होगा और मेरा मार्ग-दर्शन करना होगा।''

जब सरस्वती ने देखा कि बहू हृदयपूर्वक बिनती कर रही है तो उसने बहुत खुश होकर कहा, ''राधा, इधर कुछ दिनों से मैं भी यही चाह रही थी कि तुम लोगों के साथ यहीं रह जाऊँ। कोई भी परिवार तभी सुखी रह सकता है, जब पति-पत्नी के बीच में कोई मन-मुटाव न हो; उनकी विचार-पद्धति में, व्यवहार शैली में समानता हो। इसके लिए किसी और से पाठ सीखने की कोई ज़रूरत नहीं। अनुभव से ग्रहण किया जानेवाला विवेक ही इसके लिए उपयोग में आता है। ऐसा न होने पर स्वर्ग जैसा गृह भी नरक बन जाता है।''

माँ और पत्नी के प्रोत्साहन से विजय के जीवन में एक नया अध्याय शुरू हुआ। वह बढ़िया व्यवसायी बन गया और खूब कमाने भी लगा। वह भी खुश रहने लगा और साथ ही माँ और पत्नी को भी खुश रखने लगा।
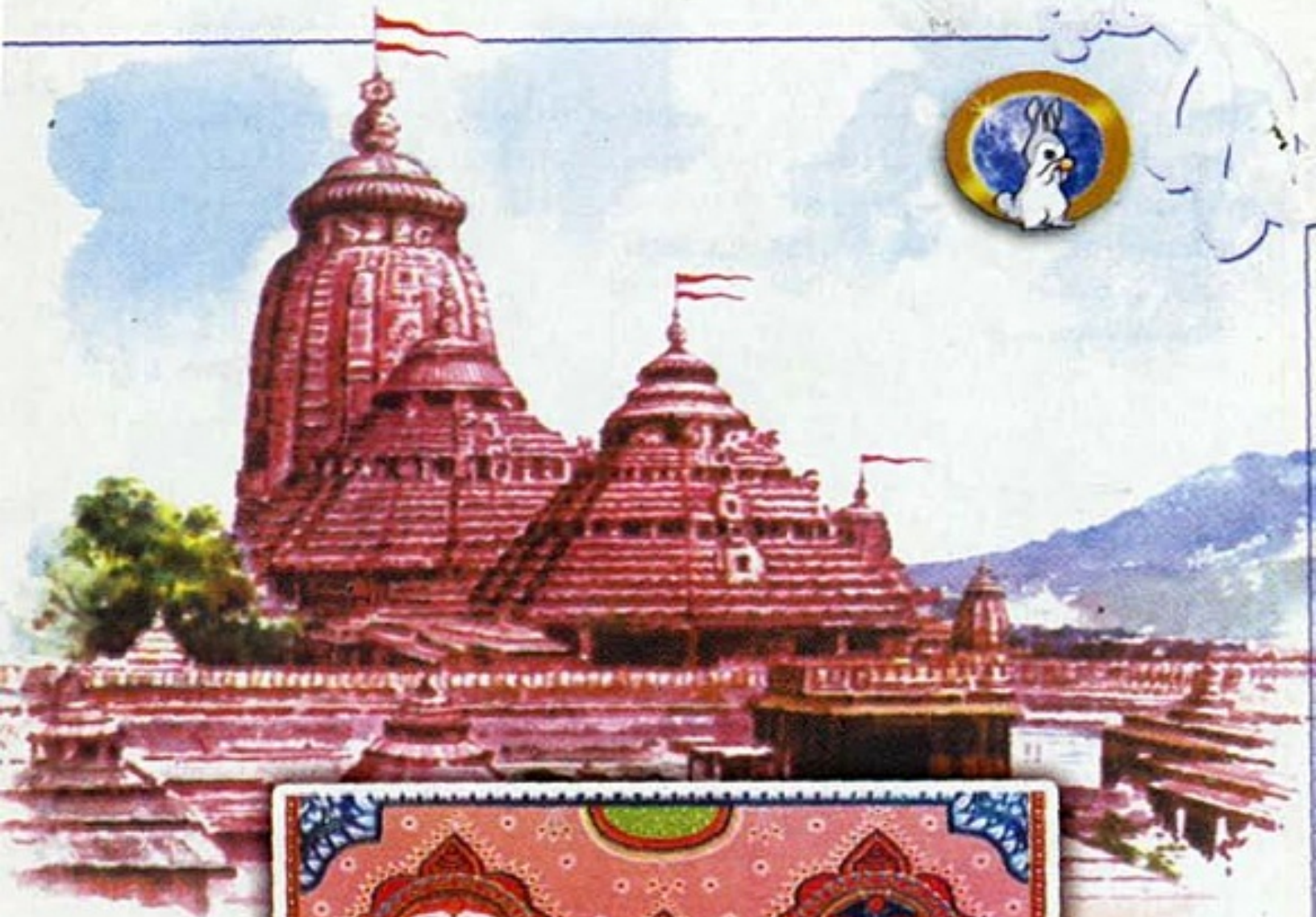
चन्दामामा प्रस्तुत करता है

रथ यात्रा एवं श्री जगन्नाथ की गाथा

मनोज दास

रथ यात्रा एवं श्री जगन्नाथ की गाथा

उड़ीसा में पुरी नगरी जो अनन्त काल से श्री क्षेत्र के रूप में भी विख्यात है, श्री जगन्नाथ मंदिर के लिए जगत प्रसिद्ध है। विश्वास किया जाता है कि यहाँ के आराध्य देवता की प्रतिमा में श्री कृष्ण के पवित्र अवशेष सुरक्षित हैं।

श्री जगन्नाथ श्री कृष्ण की छवि हैं। वे यहाँ अपने बड़े भाई बलभद्र तथा छोटी बहन सुभद्रा के साथ पूजे जाते हैं।

रथ यात्रा का उत्सव (अथवा रथों का पर्व) श्री कृष्ण की गोकुल से मथुरा तक की यात्रा, जहाँ वे असुर राजा कंस का वध करनेवाले थे, की स्मृति में मनाया जाता है।

ऐसा विश्वास किया जाता है कि मूल मंदिर के संस्थापक राजा इन्द्रद्युम्न की रानी गुंडिचा देवी के अनुरोध पर यह परम्परा चलाई गई।

तीनों आराध्य देव तीन भव्य रथों में विराजमान रहते हैं जिन्हें हजारों भक्त बडदण्ड अथवा भव्य पथ से होकर एक अस्थायी निवास तक खींचकर ले जाते हैं। इस पर्व के अवसर पर भारत के कोने-कोने से तथा अन्य देशों से भी लाखों तीर्थयात्री दर्शन के लिए आते हैं।

यद्यपि मुख्य रथ यात्रा-समारोह पुरी में किया जाता है, फिर भी इस उत्सव को देश के अनेक भागों

में भी मनाते हैं। इसे कुछ पाश्चात्य नगरों में उन भक्तों द्वारा बड़े धूमधाम से मनाया जाता है जिन्होंने हाल में श्री कृष्ण की उपासना स्वीकार की है।

श्री जगन्नाथ की कहानी पौराणिक युग की एक मंत्रमुग्धकारी गाथा है, जो इस प्रकार है :

राजा इन्द्रद्युम्न को उनकी प्रजा बहुत प्यार करती थी। दूसरे राजा भी उनका बहुत सम्मान करते थे। चारण उनकी महिमा का गुणगान करते थकते नहीं थे।

ये विद्वानों, कवियों, कलाकारों को प्रोत्साहित करने के लिए प्रचुर पुरस्कार और जरूरतमंदों को पर्याप्त दान दिया करते थे। इनके राज्य में हरेक व्यक्ति सुखी और संतुष्ट था।

इतना सब कुछ होते हुए भी राजा के मन में कुछ असंतोष था, जो उनके मन को व्याकुल बनाए हुए था। उनकी कोई ऐसी इच्छा न थी, जो पूरी न हुई हो; फिर भी राजा की समझ में नहीं आता था कि किस अज्ञात असंतोष से वे इतने पीड़ित हो रहे हैं।

एक दिन यकायक उनके मन की यह अज्ञात कामना प्रकट हुई, जैसे आसमान में काले बादलों के दूर होते ही चाँद अपनी शीतल ज्योत्स्ना को चारों तरफ बिखेर देता है। अनायास उनके मन में एक विचार का उदय हुआ। वह यह कि भावी पीढ़ियों के भक्तों के लिए यात्रा-स्थल बन सकनेवाले एक विशाल मंदिर का निर्माण करना चाहिए। यह एक ऐसा अभिनव मंदिर हो, जैसा दुनिया में अन्यत्र कहीं भी न हो। इस विचार के मन में आते ही राजा के भीतर से सारा असंतोष जाता रहा। फिर भी उनके सामने एक समस्या उठ खड़ी हुई कि नव-निर्मित मंदिर में किसकी मूर्ति को प्रतिष्ठित किया जाए? उस रात सोने के पहले राजा इसी समस्या पर गंभीर चिंतन करते रहे और विचार करते-करते सो गये। नींद में राजा ने एक सपना देखा। सपने में उन्हें एक वाणी सुनाई दी, ''तुम पहले नये मंदिर का निर्माण करो, ठीक समय पर तुम्हें मूर्ति अपने आप प्राप्त हो जाएगी।''

राजा अत्यन्त प्रसन्नता के साथ नींद से जाग उठे। अब उनके मन की चिंता दूर हो गई थी। सुबह होते ही राजा ने अपने सभी मंत्रियों को बुलाया और उनके सामने अपने मन की इच्छा प्रकट की।

इसके बाद शुभ-मुहूर्त पर पूर्वी समुद्र के तट पर एक विशाल प्रदेश में आगम-शास्त्रियों के नेतृत्व में मंगल वाद्यों तथा वेद-मंत्रों के साथ मंदिर के निर्माण का श्रीगणेश हुआ।
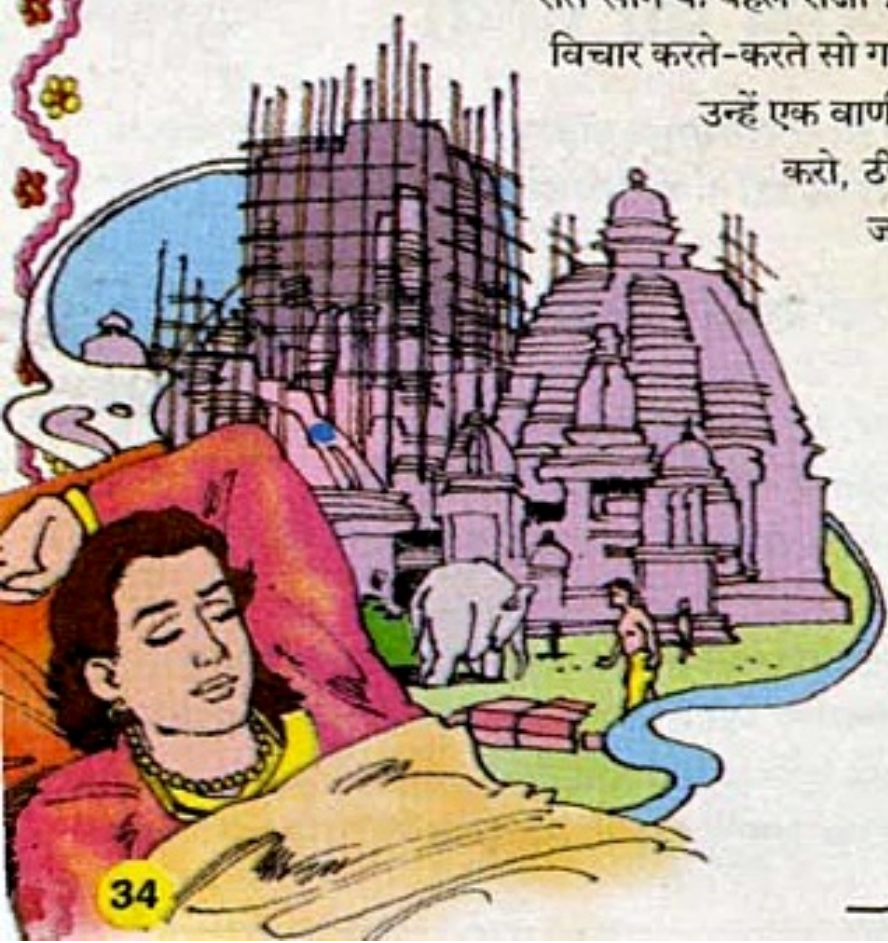
मंदिर के निर्माण के लिए आवश्यक भारी शिलाएँ दूर-दूर तक के पहाड़ी प्रदेशों से मँगवायी गयीं। समुद्रों तथा नदियों के मार्ग से जहाजों, नावों तथा हाथी जुते वाहनों पर उन शिलाओं को समुद्र के तट पर पहुँचाया गया।

देश के कोने-कोने से आये हज़ारों शिल्पी और कुशल कारीगर दिन-रात मंदिर के निर्माण में जुट गये। उनके श्रद्धा-भक्तिपूर्ण उत्साह से तथा अथक परिश्रम के फलस्वरूप उन कठिन शिलाओं में रमणीय फूल विकसित हुए। पत्थरों में अपूर्व कलाकारी के दर्शन होने लगे। कुछ ही वर्षों में मंदिर बनकर तैयार हुआ। सागर की लहरों को स्पर्श करनेवाले समुद्र तट पर गगनचुंबी विशाल मंदिर का निर्माण पूरा हुआ।

मंदिर के तैयार होने पर हर कोई प्रश्न पूछने लगा, "मंदिर के भीतर भगवान कहाँ हैं? राजा भी इस बात पर गहरा चिंतन करने लगे, साथ ही उन्हें बड़ी चिंता होने लगी। एक दिन राजा ने मंदिर के गर्भ-गृह में प्रवेश कर आँखों में आँसू भर कर कहा, "हे भगवान, आप किस रूप में इस मंदिर में विराजमान होकर रहना चाहते हैं? क्या इस बात को प्रकट करने का समय अभी तक नहीं आया है? और कितने दिन हमें प्रतीक्षा करनी पड़ेगी? इतने परिश्रम के बाद निर्मित यह मंदिर आज शून्य है। यह देख क्या लोग मुझ पर हँसेंगे नहीं? हे करुणानिधान, आप प्रसन्न होकर मेरा मार्गदर्शन कीजिए। इस मंदिर को सूना-सूना कब तक देखता रहूँ?"

उस दिन रात को राजा ने फिर एक सपना देखा। उस सपने में उनको एक दिव्य संदेश मिला, "यहाँ से पास ही भगवान श्रीकृष्ण के रूप में हैं। खोजने पर वे कृपानिधान तुम्हारे वश हो जाएँगे।"

भक्तों के साथ आँखमिचौनी का खेल खेलना भगवान श्रीकृष्ण का स्वभाव है। अतः राजा ने जान लिया कि वे सहज प्राप्त नहीं होंगे। उनका पता लगाने के लिए निर्मल हृदय और विवेकशील भक्त का होना आवश्यक है। इसलिए राजा ने इस महत्कार्य को अपने चार दरबारी पंडितों को सौंप दिया। वे चारों पंडित चार दिशाओं में चल पड़े।

सबसे छोटा पंडित विद्यापति पूर्व दिशा में चल पड़ा। थोड़ी दूर चलने के बाद वह उत्तर दिशा की ओर मुड़ा। रास्ते में उसे एक जंगल दिखाई दिया। उसने अपने मन में श्रीकृष्ण की प्रार्थना की। उसे पूरा विश्वास था कि श्रीकृष्ण की शरण में जाने पर मार्गदर्शन करना उन्हींका दायित्व है। भगवान ही उसे रास्ता दिखा रहे हैं, ऐसा भाव मन में रखकर उसने जंगल में प्रवेश किया। धीरे-धीरे जंगल घना होता गया।

जंगल के बीच उसे एक पहाड़ दिखाई दिया। पहाड़ के ऊपर से लयबद्ध संगीत की ध्वनियाँ सुनाई दीं। पहाड़ के समीप पहुँचते हुए विद्यापति सोच रहा था - यह कोई संगीत पर्वत तो नहीं है! मृदंग,

मुरली और करताल की मिश्रित ध्वनियों के साथ एक अद्‌भुत गान उसे सुनाई दिया। वैसे विद्यापति काव्य और संगीत का बड़ा प्रेमी था। तरह तरह का संगीत उसने सुना था। पर ऐसे स्वर्गीय संगीत को उसने आज तक कभी न सुना था। थोड़ी देर तक इस संगीत को सुनता हुआ उसने अपने कानों को तृप्त कर लिया और जान लिया कि वे संगीत की ध्वनियाँ पहाड़ के उस पार से आ रही हैं।

उसने धीरे से पहाड़ पर चढ़कर देखा। पहाड़ से सटकर एक सुंदर घाटी थी और वहाँ भील युवतियाँ संगीत के ताल पर नृत्य कर रहीं थीं। एक वृक्ष की डाल पकड़े विद्यापति उस लुभावने दृश्य को देर तक देखता रहा। वह बहुत दूर तक पैदल चलकर आया था, इसलिए थक गया था। वह स्वर्गीय संगीत सुनकर उसकी सारी थकान दूर हो गई।

अचानक बाघ का गर्जन सुनकर विद्यापति चौंक पड़ा और उसने पीछे मुड़कर देखा कि गरजता हुआ एक बाघ उसी की ओर दौड़ता चला आ रहा है। ऐसा लगा कि बाहर से आये किसी अपरिचित अतिथि का वहाँ आना उसको पसंद नहीं था, और इसलिए वह उसे कड़ी सज़ा देना चाहता था। उसकी समझ में नहीं आया कि क्या करे। मारे घबराहट के वह बेहोश होकर वहीं गिर पड़ा।

बाघ को सम्बोधित कर एक स्त्री ने पुकारा, "बाघा !" और बाघ मौन खड़ा हो गया। उसी स्त्री ने आज्ञा दी, "लौट आ।"

मुड़कर बाघ उस स्त्री-वृन्द की ओर बढ़ा और उसे पुकारनेवाली युवती के पास जाकर बिल्ली के बच्चे की भाँति उसके पैरों के पास लेट गया। उस युवती ने बाघ की पीठ को प्यार से थपथपाया। वहाँ की सभी स्त्रियों में वह युवती अधिक लंबी और खूबसूरत थी। उसका नाम था ललिता। ललिता भील सरदार विश्वावसु की इकलौती पुत्री थी।

ललिता के आदेश पर दो युवतियाँ दौड़ी-दौड़ी बेहोश विद्यापति के पास पहुँची और केले के पत्तों से उसे झलने लगीं। पासवाले झरने से एक युवती कमल-पत्र के दोने में पानी ले आई और उसे विद्यापति के मुख पर छिड़क दिया। थोड़ी देर में विद्यापति ने आँखें खोल दीं। युवतियों ने उसे पानी पिलाया।

अब ललिता स्वयं विद्यापति के पास आई और बोली, "महाशय, मैं नहीं जानती कि आप कौन हैं। मुझे यह भी पता नहीं कि आप कहाँ से आ रहे हैं और कहाँ जा रहे हैं। फिर भी आपको इस हालत में अकेले छोड़कर मैं कैसे जा सकती हूँ? क्या आप मेरे साथ हमारी बस्ती पर चलेंगे?" ललिता के प्रस्ताव को स्वीकार कर वह उसके साथ चलने को तैयार हो गया।

ललिता विद्यापति को अपनी बस्ती पर ले गई। विश्वावसु को विद्यापति जैसे विद्वान और ज्ञानी से मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई।

विद्यापति कुछ दिन विश्वावसु के यहाँ मेहमान बनकर रहा। उसने श्रुति और स्मृति के श्लोक सुनाकर उनका गूढार्थ वहाँ के दर्शन-प्रेमियों को समझाया। उसके उपदेशों को विश्वावसु तथा ललिता बड़ी रुचि के साथ सुनते थे।

इस दौरान विद्यापति जान गया कि ललिता के मन में उसके प्रति विशेष प्रेम पैदा हो गया है। पर जिस कार्य की सिद्धि के लिए वह निकला था, वह बड़ा ही महत्त्वपूर्ण था। इसलिए उस कार्य में ध्यान लगाकर नित्य भगवान के चिंतन में लीन रहने लगा।

इन्हीं दिनों में विद्यापति एक बार अचानक बीमार पड़ गया। तब ललिता ने पास रहकर उसकी सेवा-शुश्रूषा की। धीरे-धीरे वे दोनों एक दूसरे के अधिक निकट आते गये। विद्यापति ने स्वयं समझ लिया कि उसके मन में भी ललिता के प्रति स्नेह-भाव पैदा हो गया है। विश्वावसु ने प्रस्ताव रखा कि विद्यापति ललिता से विवाह कर ले। विद्यापति ने इसे स्वीकार कर लिया।

कुछ दिन मिनटों के समान बीत गये। ललिता से विवाह करके विद्यापति प्रसन्न तो था, पर जिस महत्त्वपूर्ण कार्य को संपन्न करने के लिए वह राजधानी छोड़कर आया था, उसकी पूर्ति अभी तक नहीं हुई थी। यही चिंता उसे बार-बार सताने लगी।

इस बीच विद्यापति ने एक विशेष बात जान ली। ललिता का पिता विश्वावसु हर रोज़ सबेरे उठकर कहीं चला जाता था और सूर्योदय के उपरांत ही लौटता था। चाहे आँधी हो या तूफान, चाहे मूसलाधार बरसात हो, अपने इस नियम को वह कभी तोड़ता न था। विश्वावसु के इस दृढ व्रत पर विद्यापति को बड़ा आश्चर्य हुआ। साथ ही साथ उसके मन में प्रबल इच्छा हुई कि जान ले, आखिर विश्वावसु जाता है कहाँ? एक दिन उसने ललिता से इस संबंध में पूछा।

इस पर ललिता ने विद्यापति को समझाया, "यह तो हमारे वंश से संबंधित एक रहस्य है, जिसे किसी के सामने खोला नहीं जा सकता। फिर भी आप मेरे पतिदेव हैं, इसलिए आपसे इस रहस्य को क्या छिपाऊँ? यहाँ से थोड़ी दूर पर एक गुफा के अंदर जो भगवान है, उसकी पूजा हमारे सभी पूर्वज करते आये हैं, और जो आज भी चल रही है। उसी भगवान की पूजा करने के लिए मेरे पिताजी हर रोज़ सुबह नियमित रूप से जाते हैं।"

"मेरे मन में उस भगवान के दर्शन करने की इच्छा है।" उत्साह में आकर विद्यापति ने कहा।

ललिता ने विनय के साथ कहा, "आप कृपया अपनी इस इच्छा को भूल जाइए। उस भगवान के बारे में कोई जाने यह भी मेरे पिता की दृष्टि में अपराध है। दर्शन की तो कोई बात भी संभव कैसे हो सकती है?"

"मेरे साथ विवाह करने के बाद भी तुम मुझे पराया मानती हो, ललिता?" व्यग्रता के साथ विद्यापति ने पूछा।

नील-माधव मंदिर

विद्यापति की आँखों पर पट्टी बाँध दी गई थी, इसलिए उसे पता न चला कि उसे कहाँ ले जाया जा रहा है। तब विश्वावसु ने आँखों से पट्टी हटा दी। तत्काल नीले प्रकाश की एक दमक आई और विद्यापति ने मुरली के साथ कृष्ण की एक सुंदर प्रतिमा देखी। इसीलिए आराध्य भगवान को नील माधव कहा जाता था। माधव कृष्ण का ही एक नाम है। पुरी स्थित जगन्नाथ मंदिर का लघुरूप नीलमाधव मंदिर खंडपारा से १५ कि.मी. दूर कांतिलो गाँव में महानदी के निकट एक पहाड़ी पर अवस्थित है। कांतिलो पीतल तथा कांस्य धातु के बर्तनों के लिए प्रसिद्ध है। अन्य पर्वों के साथ-साथ भौम एकादशी नील माधव मंदिर में बड़े धूमधाम से मनाई जाती है। पर्व में सम्मिलित होने के लिए हजारों की संख्या में भक्त यहाँ एकत्र होते हैं।

ललिता थोड़ी देर मौन रही। फिर उसने कहा, "ठीक है। मैं अपने पिताजी से अनुरोध करूँगी कि वे आपको उस गुफा के पास ले जाकर भगवान के दर्शन करा दें। आप निश्चिन्त रहिए।"

उस रात को मौक़ा पाकर ललिता ने पिता से कहा कि उसका पति क्या चाहता है।

विश्वावसु ने गुस्से से बेटी को देखा, परंतु कुछ नहीं कहा।

ललिता थोड़ी देर चुप रही, फिर बोली, "पिताजी, मैं आपकी अकेली संतान हूँ न? जिस भगवान की आप पूजा कर रहे हैं, उसे आपके बाद कौन पूजेगा? वह दायित्व, आपके दामाद के नाते विद्यापति पर है न? ऐसी हालत में, मेरे पति को गुफा का भगवान आप दिखा दें तो ग़लती क्या है?"

"अच्छा, तुम्हारे संतोष के लिए मैं उसकी इच्छा की पूर्ति करूँगा।" कहते हुए विश्वावसु ने प्यार से बेटी के सिर पर हाथ रखकर सहलाया। भगवान की पूजा का दायित्व दूसरों के हाथ सौंपते वक़्त ही गुफा का रास्ता किसी को बताया जा सकता था, तब तक उसे गुप्त रखना एक नियम था। इस नियम का अतिक्रमण न हो, इसलिए

विश्वावसु ने कहा कि विद्यापति की आँखों पर एक पट्टी बांध दी जाएगी। विद्यापति ने इसके लिए अपनी स्वीकृति दे दी।

दूसरे दिन पूर्ववत् सूर्योदय के एक घंटा पहले ही विश्वावसु बिस्तर से उठा और तैयार हुआ। फिर विद्यापति की आँखों पर काली पट्टी बांधी और उसका दायां हाथ पकड़कर रास्ता बताये बिना ही उसे लेकर गुफा की तरफ विश्वावसु निकल पड़ा।

विद्यापति ने पहले ही बायें हाथ की मुट्ठी में काफी सरसों के दाने रख लिये थे जिन्हें रास्ते में छोड़ते हुए जाने लगा। इस तरह गुफा तक रास्ते में विद्यापति सरसों के दाने छोड़ता गया।

एक जगह विश्वावसु रुका और विद्यापति से कहा, "हम गुफा के पास पहुँच गये। सिर झुकाकर गुफा के भीतर चलो।" फिर विश्वावसु ने विद्यापति की आँखों से काली पट्टी खोल दी।

विद्यापति ने आँखें खोलकर देखा। चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा था। धीरे-धीरे कुछ-कुछ उसे दिखाई देने लगा। थोड़ा-थोड़ा धुंधला। गुफा के बीच रखी पत्थर की वेदिका पर विद्यापति की आँखें टिकीं। विश्वावसु ने उस प्रस्तरवेदिका पर कुछ फूल रखे।

अचानक उस गुफा में नीले रंग का प्रकाश चमक उठा। पल भर में बांसुरी बजाने वाले श्रीकृष्ण का रूप विद्यापति के सामने दिखाई पड़ा। आनंद और आश्चर्य के साथ विद्यापति भावविभोर हो गया और उसके मुंह से चीख निकली, "आहा !"

"क्या हुआ बेटा?" यूं पूछते हुए विश्वावसु नें विद्यापति की पीठ पर एक थपकी दी।

"कुछ नहीं।" विद्यापति ने कहा। फिर चुप रहा।

जिस तरह गुफा के पास आते वक़्त विद्यापति की आँखों पर पट्टी बाँधी गयी थी, उसी तरह वापस जाते वक़्त भी पट्टी बाँधकर विश्वावसु ने सावधानी बरती।

पति को देखते ही ललिता ने पूछा, "आपने गुफा में क्या देखा?"

इस पर विद्यापति ने संजीदगी से कहा, "अंधकार से भरी गुफा में देखने को क्या रहेगा? विशेष रूप से कहने को कुछ भी नहीं है।"

गुफा में जो अलौकिक और अद्‍भुत दृश्य उसने देखा, उसके बारे में पत्नी को बताना भी उसने मुनासिब नहीं समझा यद्यपि उस रहस्य को ललिता से छिपाने में उसे बहुत पीड़ा हुई।

विद्यापति ने अनुभव किया कि विश्वावसु जिस मूर्ति की पूजा कर रहा है, वह श्रीकृष्ण की है। उस प्रस्तरमूर्ति को अपने साथ लेकर राजधानी पहुँचना ही अपना कर्तव्य होगा। तुरंत उसके मन में एक और विचार आया कि ऐसा करना, अपने ऊपर इतना विश्वास रखनेवाले विश्वावसु के प्रति क्या बेईमानी नहीं होगी?

इस तरह विद्यापति धर्म-अधर्म के बारे में काफी देर तक सोचता रहा। उसके मन में फिर एक विचार आया कि विश्वावसु ने सचमुच मेरे ऊपर विश्वास नहीं किया था। वरना इस तरह आँखों पर पट्टी बांधकर गुफा तक ले जाने की बात वह नहीं सोचता। ऐसी हालत में गुफा से भगवान की मूर्ति उठाकर ले जाना क्या अधर्म कहलाएगा?

एक दिन विद्यापति ने ललिता से कहा, "राजधानी में अपने माता-पिता को छोड़कर मैं आ गया। काफी वक़्त गुज़र गया। मेरा समाचार न मिलने से वे काफी चिंतित होंगे। शीघ्र वहाँ जाकर अपने वृद्ध माता-पिता का योग-क्षेम देखना पुत्र के नाते मेरा धर्म है न? फिर भी, तुम्हें छोड़कर जाना मेरे बस का काम नहीं लगता। यदि मैं तुम्हें अपने साथ ले जाऊँ तो वहाँ के लोग शायद तुम्हें अजीब ढंग से देखने लगेंगे। और तुम्हें अपनी जान से ज़्यादा चाहनेवाला तुम्हारा पिता तुमसे बिछुड़कर यहाँ अकेले क्या रह सकेगा? तुम्हें देखे बिना क्या वह इस बुढ़ापे में यहाँ सुखचैन से जी सकेगा?" विद्यापति ने पूछा।

"हमेशा की तरह जब तक आप मुझे प्यार के साथ देखा करेंगे, मुझे किसी बात की चिंता नहीं रहेगी। ऐसी हालत में लोग मेरे बारे में कुछ भी सोचें-कहें, मैं परवाह नहीं करती।" ललिता ने कहा। फिर थोड़ी देर चुप रहकर, आँसू पोंछते हुए कहने लगी, "मैं आपके साथ आना चाहती हूँ, लेकिन ऐसा करूँ तो मेरे पिता की देखरेख कौन करेगा? यही चिंता मुझे खटक रही है।"

"तुम्हारा विचार सही है। अपने पिता को यूं अकेले छोड़कर मेरे साथ आना अच्छा नहीं होगा। इसलिए तुम यहीं रहो। यदि मुझे इज़ाज़त दोगी तो मैं अपने माता-पिता को देखने के लिए जाना चाहता हूँ। फिर जल्दी वापस आ जाऊँगा।" विद्यापति ने ललिता से कहा।

"सच? क्या आप सचमुच वापस आयेंगे?" ललिता ने उदास चेहरे को उठाकर आश्चर्य से पूछा।

"तुमसे बिछुड़कर क्या मैं अकेले रह पाऊँगा?" विद्यापति ने पूछा, जिससे ललिता को आश्वासन मिला।

"ऐसी बात है तो आप जाइए, जल्दी लौट आइए। आप मेरे सास-ससुर को बताइए कि मैं उनके आशीष लेने के शुभदिन की प्रतीक्षा कर रही हूँ।" ललिता ने कहा।

अपने पति की इच्छा के बारे में ललिता ने पिता से बात की। विश्वावसु ने भी अपनी स्वीकृति दे दी। विद्यापति के लिए वह अनेक उपहारों का इंतजाम करने लगा। मगर उपहार अपने साथ ले जाने के लिए विद्यापति तैयार नहीं हुआ, इसलिए उसने कहा, "उपहार ले जाने का यह समय नहीं है। ललिता को साथ लेकर जाते वक़्त उपहार ज़रूर ले जाऊँगा। पहले अपनी शादी के बारे में मुझे अपने माता-

पिता को बताने दीजिए। बाद में ललिता को साथ ले जाते वक़्त उपहार भी ले जाऊँगा।''
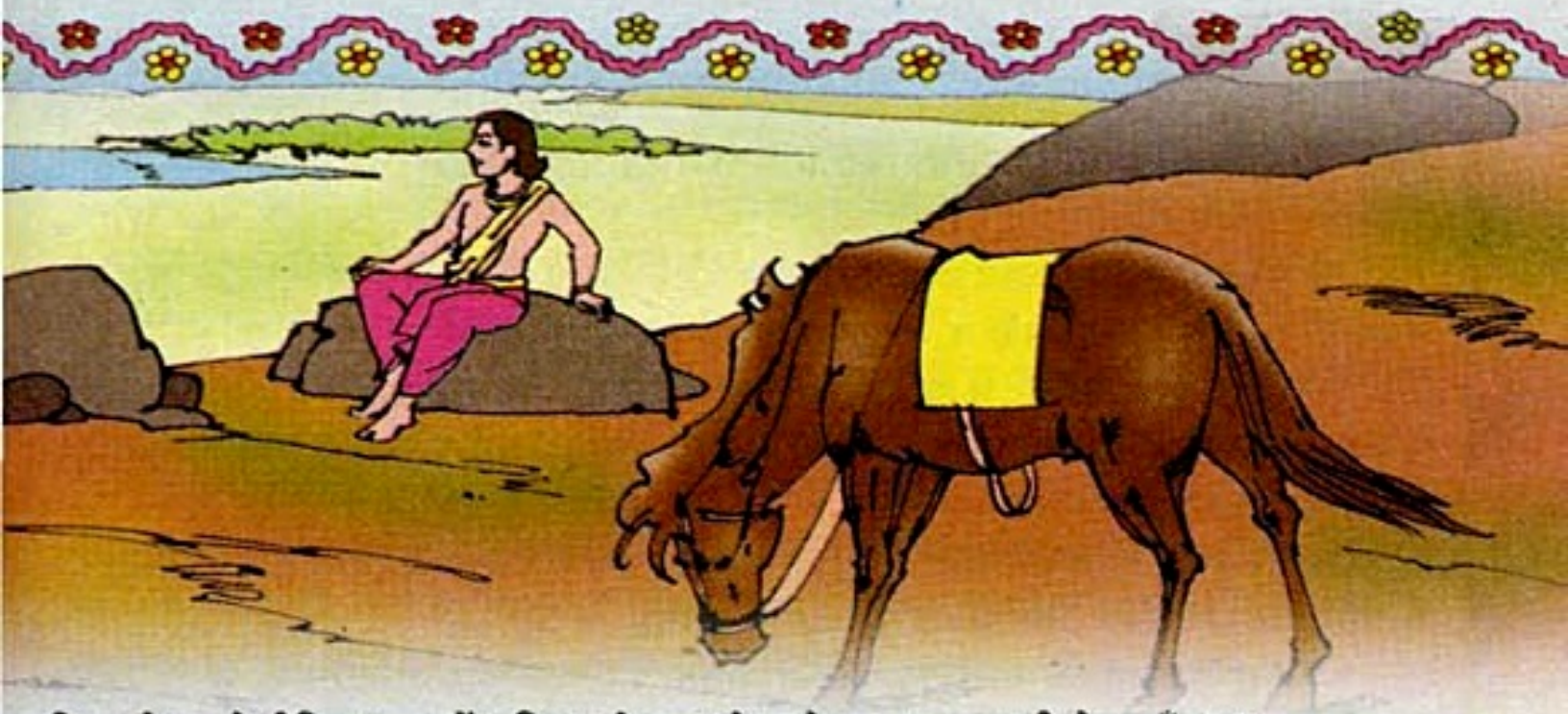
ये बातें विश्वावसु को वाजिब लगीं। दामाद की यात्रा के लिए एक अच्छे घोड़े का प्रबंध किया।

विश्वावसु और ललिता से अलविदा कहकर, विद्यापति घोड़े पर बैठा और राजधानी के लिए निकला। ललिता ने आँसू के साथ विद्यापति को विदा किया।

कुछ दिन पहले गुफा को जाते वक़्त गुप्त रूप से छोड़ी गयी सरसों के अब तक पौधे निकल चुके थे। उनकी वजह से गुफा का रास्ता साफ-साफ दिखाई देने लगा। विद्यापति आसानी से गुफा के पास पहुँचा।

गुफा के मुखद्वार को छिपाते हुए बड़े-बड़े पत्थर रखे हुए थे।

विद्यापति घोड़े से उतरा। सावधानी बरतते हुए गुफा के भीतर पहुँचा। वहाँ एक और बार उसने दिव्य अनुभूति पायी। मन ही मन उसने भगवान से क्षमा-याचना की, 'भगवन्, तुम्हीं पर भरोसा रखकर, अपने लिए जो श्रेष्ठ दिखाई दिया, वह कर्तव्य निभा रहा हूँ। मुझसे कोई अपराध हुआ तो मुझे क्षमा करो भगवन्, मेरी रक्षा करो !' फिर प्रस्तरवेदिका पर रखी उस छोटी सी प्रस्तरमूर्ति को उठाकर विद्यापति ने उसे आँखों से लगा लिया। फिर उस मूर्ति को थैली में डालकर, गुफा से बाहर आ गया और घोड़े पर बैठ गया।

विद्यापति प्रसन्न था कि उसने निर्दिष्ट कार्य को पूरा कर लिया था। वह प्रसन्न था कि घने जंगलों को पारकर अब वह चमकती धूप से आप्लावित समतल मैदान में पहुँच गया था।

लेकिन जैसे ही उसने पीछे मुड़कर जंगल की ओर देखा, उसका हृदय विषाद से भर गया।

''हे प्रभु !'' मन ही मन विद्यापति बुदबुदाया। ''जो मैंने किया वह तो करना ही था। केवल यदि आप द्वारा निर्दिष्ट किसी महान उद्देश्य की इससे पूर्ति हो सके तो मुझे शांति मिलेगी।''

शाम तक वह राजधानी पहुँच गया और सीधा राजमहल में चला गया। एक राजकर्मचारी ने दूर से ही विद्यापति को देखा, और उसके आने की खबर राजा को पहुँचा दी। इस पर राजा खुश हुआ,

विद्यापति को देखते ही पूछा, "तुम्हारे लौट आने का मैं कई दिनों से इंतज़ार कर रहा हूँ, अपने काम में सफलता पाई कि नहीं?"

"मैं समझता हूँ, जिस दिव्य प्रतिमा की खोज में गया था, वह ले आया हूँ। फिर भी..." कुछ और कहने की कोशिश की विद्यापति ने, मगर राजा ने उसे यह मौका नहीं दिया।

"संदेह और शंका को मन से हटा देना पुत्र। ज़िंदगी में बड़े-बड़े काम साधने में अनेक संकटों का सामना करना पड़ता है। इस महान और पवित्र काम को साधने में तुम्हें कौनसी समस्या का मुकाबला करना पड़ा, यह बताओ।" राजा ने कहा।

"मेरी समस्या तो अपनी स्वयं की है। मेरी इस पीड़ा में कोई अन्य भागीदार नहीं हो सकता।" विद्यापति ने कहा। फिर उसने अपनी पूरी कहानी सुनाई।

तब राजा ने विद्यापति को तसल्ली देने की कोशिश की, "इस तरह सोचना अभी से बंद कर दो पुत्र। हमारे मंदिर के निर्माण के लिए दूर-सूदूर प्रांतों से अनेक मूर्तिकार आये, रात-दिन अथक परिश्रम करके उन मूर्तिकारों ने श्रमदान किया। इसके पीछे हम ने भी काफ़ी धन खर्च किया, बहुत मेहनत की। हम जो काम कर रहे हैं, यह महान है और पवित्र भी। इस पवित्र कार्य के पीछे यदि कोई कुछ खोए तो भी वह स्वाभाविक ही समझो। इसलिए तुम्हें इस बात पर दुख करना नहीं चाहिए। मैंने सपने में देखा कि सागर में कल सुबह एक कुंदा बहकर आएगा। उस कुंदे को छिलवाकर, नक़ाशी करवाकर भगवान की मूर्ति बनवा लेंगे। तुम जिस मूर्ति को ले आए हो, उसमें भगवान विष्णु का अंश है। है न? इस प्रतिमा को हम कुंदे से बनी भगवान की मूर्ति में सुरक्षित करवा लेंगे। इस दिव्य मूर्ति का दर्शन-भाग्य पाकर वह महात्मा भी खुश होगा, जिसने तुम्हें आतिथ्य दिया था।"

दूसरे दिन सूर्योदय से एक घंटा पूर्व ही राजा अपने साथ विद्यापति तथा मंत्रियों को लेकर सागर के किनारे पहुँचा। जब सूर्योदय होने लगा तो राजा बेहद आनंद और उत्साह से चीख पड़ा, "वह रहा कुंदा ! लहरों पर तैरता हुआ आ रहा है, देखो, देखो !"

सबने मुक्त कंठ से कहा, "हाँ, महाराज ! दिखाई दे रहा है साफ़-साफ़ बड़ा सा लंबा-चौड़ा कुंदा।"

दूसरे ही पल दस नावें सागर में निकलीं। उन नावों में जो लोग थे, वे उस कुंदे को किनारे की तरफ धकेलने की कोशिश करने लगे, मगर वह जरा भी नहीं हिला। इस पर मोटी रस्सियों से कुंदे को नावों के साथ लगाकर बांध दिया गया। नावों ने भी कुंदे को किनारे पर ले आने की बहुत कोशिश की, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ।

इस पर राजा का मन उदास हो गया। मंत्रीगण चिंता में डूब गये। सैनिकों को बुलाया गया। उन सबने भरसक प्रयास किया। पर सब व्यर्थ !

चाँदनी रात थी। सैनिक और नाविक अभी भी उस रहस्यमय कुंदे के साथ संघर्ष कर रहे थे। "रोक दो काम!"

अचानक राजा ने आदेश दिया। फिर अपने पास विद्यापति को बुलाकर कहा, "अब मैं समझ गया कि कुंदा क्यों नहीं हिल रहा है। तुम जिस दिव्य मूर्ति को अपने साथ ले आए हो - उसकी अब तक जंगल में जो महानुभाव पूजा करता आया था, उसे मैं तुरंत देखना चाहता हूँ। मुझे उसके पास ले चलो। उसके स्पर्श से ही यह कुंदा आगे बढ़ेगा।"

पर्वत की चोटी से जंगल ऐसा लगता था मानों आगे बढ़ती हुई सागर की लहरें किसी मांत्रिक प्रभाव से यकायक रुक गई हों।

भीलों की बस्ती तो हमेशा शान्त रहती थी। दो दिनों से वहाँ की खामोशी और बढ़ चुकी थी। रोज की तरह तड़के ही उठकर निकला था विश्वावसु और थोड़ी ही देर में लौट आया था। "बेटी, यह क्या कर दिया तुम्हारे पति ने !" यह कहते हुए विश्वावसु घर के आंगन में लुढ़क गया। यह देखकर ललिता को तत्काल आत्मबोध सा हुआ और वह जान गई कि क्या हुआ होगा। वह हमेशा महसूस करती थी कि विद्यापति उसे बहुत प्यार करता है, फिर भी उसके साथ रहने की इच्छा के पीछे उसका कोई विशिष्ट प्रयोजन था और वह उसी की पूर्ति की प्रतीक्षा कर रहा था। विश्वावसु के आघात का ललिता के लिए एक ही अर्थ था : विद्यापति उनके रहस्यमय भगवान की प्रतिमा को लेकर भाग गया था, जिसमें वह इतनी रुचि ले रहा था।

दिन गुजरा और रात भी बीत गई। उन दोनों ने न अन्न का एक दाना स्पर्श किया और न उनकी आँखें लगीं। दूसरे दिन सुबह विश्वावसु उठा, रोज की तरह गुफा की तरफ़ निकला। उसके पीछे ललिता और रिश्तेदार भी चलने लगे। विश्वावसु गुफा के भीतर पहुँचा। जहाँ पहले भगवान की मूर्ति थी, उस चट्टान के पास पहुँचकर टकटकी बांधे खड़ा रहा। फिर उस ऊँची चट्टान पर गिरकर, विश्वावसु बिलख-बिलखकर रोने लगा।

दोपहर के वक़्त एक भील युवक दौड़ते हुए गुफा के पास आया और बताया, "पहाड़ पर से कुछ लोग हमारी तरफ़ आ रहे हैं। उनमें महाराजा भी हैं।"

यह सुनकर सब चौंक उठे। थोड़ी देर में एक और भील युवक दौड़ा-दौड़ा चला आया और बोला, "जो लोग हमारी ओर आ रहे हैं, उनमें विद्यापति भी है।"

विश्वावसु गुफा से बाहर चला आया। दूर से राजा आ रहे थे। दोनों हाथ जोड़कर विश्वावसु शिला जैसा खड़ा था। राजा सीधा विश्वावसु के पास आया, फिर उसे बाहों में ले आलिंगन करते हुए बोला, "महाशय, चोर तुम्हारा

दामाद नहीं, मैं हूँ। मुझे माफ करो !" यह सुनकर सब चौंक उठे और राजा को देखने लगे।

आँसू पोंछते हुए विश्वावसु ने पास की चट्टान दिखाई और राजा को इशारा किया कि बैठ जाएँ। राजा ने उस चट्टान पर बैठकर कहा, "विश्वावसु, मेरी बात कृपया अंत तक सुन लो।" फिर राजा ने उससे कहा कि कैसे भगवान की प्रेरणा से उसने जगन्नाथपुरी के सागर तट पर एक मंदिर बनवाया और मंदिर में प्रतिष्ठापन के वास्ते भगवान की मूर्ति के लिए कुछ पंडितों को बाहर भेजा और लाचार होकर कैसे विद्यापति ने मूर्ति की चोरी की। फिर राजा ने विश्वावसु से प्रार्थना की, "विश्वावसु, अनेक पीढ़ियों से तुम्हारे वंश के लोग उस भगवान की मूर्ति की पूजा करते रहे। आगे अनेक भक्तों की पूजाएँ उस दिव्य मूर्ति को मिलें, यह है भगवान का संकल्प। एक देवदत्त कुंदे से बनी मूर्ति के भीतर हम इस दिव्य मूर्ति को सुरक्षित रखना चाहते हैं। इसके लिए तुम्हारी स्वीकृति हम लेना चाहते हैं। अपने वंश की दिव्य प्रतिमा को पुरी के मंदिर में प्रतिष्ठापन करने के लिए तुम हमें सानंद अनुमति दो विश्वावसु।"

विश्वावसु ने चुपचाप सिर हिला दिया। तब राजा ने फिर सागर में एक इंच भी न हटनेवाले कुंदे के बारे में बताकर कहा, "तुम हमारे साथ अभी चलो। उस कुंदे को छूकर, इस प्रयत्न में हमें अपना पूरा सहयोग दोगे, ऐसा हमारा विश्वास है।"

विश्वावसु थोड़े पल मौन रहा, फिर कहा, "आपकी आज्ञा के अनुसार आपके साथ आने को मैं तैयार हूँ प्रभु !"

यह सुनकर राजा का दिल हल्का हुआ, ऐसा लगा कि बहुत बड़ा बोझ उतर गया हो। इस खुशी में एक और बार राजा ने विश्वावसु को प्यार से बाहों में भर लिया।

दूसरे दिन शाम तक राजा सपरिवार तथा अपने साथ विश्वावसु को लेकर सागर तट पर पहुँचा। विश्वावसु नाव में बैठकर सागर में थोड़ी दूर आगे बढ़ा और कुंदे को उसने भक्ति के साथ छू लिया। तुरंत वह कुंदा अपने आप तैरता हुआ किनारे पर आ लगा। यह देखकर वहाँ उपस्थित सब लोगों के चेहरे खुशी से खिल उठे। राजा के संतोष का पारावार नहीं था। राजा के कर्मचारियों ने उस कुंदे को राजमहल में पहुँचा दिया।

अगले दिन तड़के ही मूर्तिकारों और दरबारी शिल्पाचार्यों को बुलवाकर राजा ने पूछा, "इस कुंदे से कौनसी देवमूर्ति बनाना शुभदायक होगा?"

तब मूर्तिकारों ने अदब के साथ राजा से कहा, "प्रभु ! शिलाओं को देवी-देवताओं की प्रतिमाओं में बदलना हम जानते हैं। मगर इस तरह लक्कड़ से भगवान की प्रतिमा बनाने के हम बिलकुल आदी

नहीं है। इस काम में हमारा जरा भी अनुभव नहीं है।'' ठीक उसी वक़्त वहाँ एक बूढ़ा आया।

उसने राजा से कहा, ''राजन्, आप द्वारा बनाए गये इस मंदिर में भाई-बहन बलभद्र तथा सुभद्रा के साथ मिलकर श्रीकृष्ण के रूप में भगवान विराजमान हों - यही दैवी संकल्प है। इस मंदिर की विशेषता भी यही है। आप मुझे इजाज़त दीजिए, मैं इस पवित्र कार्य में आगे बढूँगा और वे मूर्तियाँ बना दूँगा। मगर आपसे मेरी एक प्रार्थना है। दरवाजे बंद करके तनहाई में बैठकर मैं यह काम करूँगा। जब यह काम पूरा होगा, तभी मैं दरवाजे खोलकर आऊँगा। इस बीच किसी को मेरे पास नहीं आना चाहिए। मुझे संपूर्ण एकांत चाहिए।''

''ऐसी हालत में आपके खाने-पीने की व्यवस्था कैसे होगी?'' राजा ने कहा।

''आप उसकी चिंता छोड़िए राजन्। जब तक काम खत्म नहीं होता, मैं न कुछ खाता हूँ, न पीता हूँ।'' उस बूढ़े ने कहा।

उस वृद्ध की बात राजा ने मान ली। राजमंदिर में एक विशाल कमरा था जिसमें जाकर उस बूढ़े ने दरवाजे बंद कर दिए। अंदर काम चल रहा था, इसके सबूत में भीतर से आवाज़ें आती थीं। बाहर से महारानी गुंडिचादेवी दरवाजे से कान लगाकर अकसर ये आवाजें सुना करती थी। छेनी और हथौड़ा के चलने की आवाजें उसे स्पष्ट सुनाई देती थीं।

एक दिन उसे कमरे के भीतर से कोई आवाज़ सुनाई नहीं पड़ी। दूसरे दिन भी आवाज़ नहीं आयी। खाना-पानी न लेता था वह बूढ़ा, बेचारा वह न जाने कैसा होगा - इस विचार से रानी गुंडिचादेवी का मन तिलमिला उठा। यह सोचकर रानी ने तुरंत दरवाजे धकेल दिए और भीतर झांककर देखा।

जल्दबाजी में महारानी गुंडिचादेवी द्वारा भूल से ऐसा होने पर उस बूढ़े मूर्तिकार को दिया गया वचन भंग हो चुका था। जब तक महारानी को अपनी भूल का एहसास हुआ तब तक जो हानि होनी नहीं चाहिए, वह हो चुकी थी।

लगन के साथ लकड़ की मूर्तियाँ बना रहा था बूढ़ा। रानी को देखते ही वह अदृश्य हो गया। इस तरह देवी-देवता की मूर्तियाँ अधूरी ही रह गई। वे उसी आकार प्रकार में पाई जाती हैं, यद्यपि समय-समय पर पुरानी की जगह पर नई मूर्तियाँ आज तक बदली जाती रही हैं। सबने सोचा कि देवताओं का शिल्पी विश्वकर्मा ही इस प्रकार वृद्ध शिल्पी के रूप में आया था। परन्तु क्या वे प्रतिमाएँ सचमुच अधूरी थीं? वे ऐसी प्रतीत होती हैं। वे साधारण आँखों को कुछ विचित्र भी लगती हैं किन्तु भक्तों को उनमें वर्णनातीत सौंदर्य की छटा और दिव्यता दृष्टिगोचर होती है।

विश्वावसु संभवतः जरा सवरा का वंशज था जिसने

अनजाने में कृष्ण की हत्या कर दी थी। विश्वावसु शायद कृष्ण के पवित्र अवशेषों की पूजा करता था। ये अवशेष मूर्तियों में छिपाकर रखे गये हैं। युग युगान्तर से इन अवशेषों को नयी मूर्तियों में अनुष्ठान के साथ लेकिन गुप्त रूप से हस्तान्तरित किया जाता रहा है। इस अनुष्ठान को नव कलेवर अथवा नव देहधारण कहा जाता है। जगत के नाथ श्री जगन्नाथ वैष्णवों के लिए एक प्रधान आराध्य देव हैं और पुरी अति प्राचीन काल से इनका पवित्र तीर्थ स्थल रहा है।

विद्यापति और ललिता के वंशज, जिन्हें दैत्यपति कहते हैं, इन आराध्य देवों के मुख्य पुजारियों में हैं।

शताब्दियों से जगन्नाथ प्रभु के बारे में अनेक कथाएँ प्रचलित हैं। उनमें से एक रथ यात्रा से संबंधित है जिसमें पुरी के राजा का प्रसंग शामिल है।

बहुत पहले कलिंग का राजकुमार पुरुषोत्तमदेव पुरी से अपने विशाल देश की यात्रा पर निकला। अनेक गाँवों और नगरों से होता हुआ वह महीनों पश्चात कांची के भव्य नगर में पहुँचा। वहाँ के राजा ने उसका स्वागत किया।

राजा की एक बेटी थी, पद्मावती। राजकुमार पुरुषोत्तमदेव उसके सौंदर्य और शील पर मुग्ध हो गया। वह कुछ दिनों तक वहाँ उसके साथ रहना चाहता था, लेकिन तभी उसे अपने पिता की बीमारी की खबर मिली। राजकुमार तुरंत पुरी लौट गया।

वृद्ध राजा स्वर्ग सिधार गये और पुरुषोत्तमदेव सिंहासन पर बैठा। काँची के राजा को यह समाचार सुनकर प्रसन्नता हुई। उसने तुरंत अपने एक मंत्री को पुरी भेजा। उस समय वहाँ जगन्नाथ स्वामी की प्रसिद्ध रथ यात्रा का उत्सव मनाया जा रहा था।

प्राचीन रीति-रिवाज के अनुसार उस मार्ग का एक भाग, जिस पर रथों को खींचकर लाया जाता था, स्वयं कलिंग के राजा द्वारा साफ किया जाता था, जो इस बात का महत्व दर्शाता था कि शक्तिशाली राजा उन आराध्य देवताओं का विनम्र सेवक मात्र है।

दुर्भाग्यवश कांची के मंत्री को यह रिवाज अच्छा नहीं लगा। उसने काँची लौटकर राजा को बताया कि राजकुमारी का विवाह एक भंगी राजा के साथ करना मर्यादा के विरुद्ध होगा। राजा मंत्री के विचार से सहमत हो गया।

इस समाचार को सुनकर पुरुषोत्तम देव क्रोधित हो उठा और उसने काँची पर आक्रमण कर दिया। किन्तु युद्ध में हार कर पुरी लौट आया। उसने पुरी के आराध्य देवों की कई दिनों तक उपासना-प्रार्थना की। अन्त में एक वाणी ने काँची पर पुनः आक्रमण करने का निर्देश दिया।

पुरुषोत्तम देव ने सेना का पुनर्गठन किया और काँची पर धावा बोल दिया। चिल्का झील के किनारे उसे एक बूढ़ी औरत ने रोका। "देखो युवक, कुछ देर पहले, दो घुड़सवार, एक श्वेत और एक श्याम हमारे यहाँ से दो प्याला दही पीकर गये और यह अंगूठी देकर यह कह गये कि मेरे पीछे आनेवाला युवक इस अंगूठी को दिखाने पर दही के पैसे दे देगा।"

राजा ने इसे पहचान लिया। यह श्री जगन्नाथ स्वामी की हीरे की अंगूठी थी। उसने अनुमान लगाया कि वे दो घुड़सवार कोई अन्य नहीं, बल्कि स्वामी श्री जगन्नाथ और बलभद्र थे। राजा ने दही के मूल्य में बूढ़ी औरत को, जिसका नाम मनिका था, एक गाँव दे दिया। यह गाँव जिसे मनिका पत्न कहा जाता है, अभी मौजूद है।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि काँची के युद्ध में पुरुषोत्तमदेव विजयी हुआ। काँची के राजा को बंदी बना लिया गया। पुरुषोत्तमदेव ने उसके साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया और उसे मुक्त कर दिया। लेकिन पद्मावती को बन्दी बनाकर वह अपने साथ पुरी ले गया।

हरेक को आशा थी कि राजा राजकुमारी से विवाह करेगा। लेकिन उसने अपने वृद्ध मंत्री को आदेश दिया, "राजकुमारी के साथ विवाह के लिए किसी भंगी की तलाश करो।" बेचारी राजकुमारी उस दिन की प्रतीक्षा करने लगी जब उसका हाथ एक भंगी को सौंप दिया जायेगा।

रथ यात्रा का उत्सव फिर आया। राजा पुरुषोत्तमदेव हाथ में सोने का झाड़ू लेकर पथ को बुहारने आया। ठीक उसी समय एक स्नेहसिक्त हाथ ने उसके कन्धों को स्पर्श
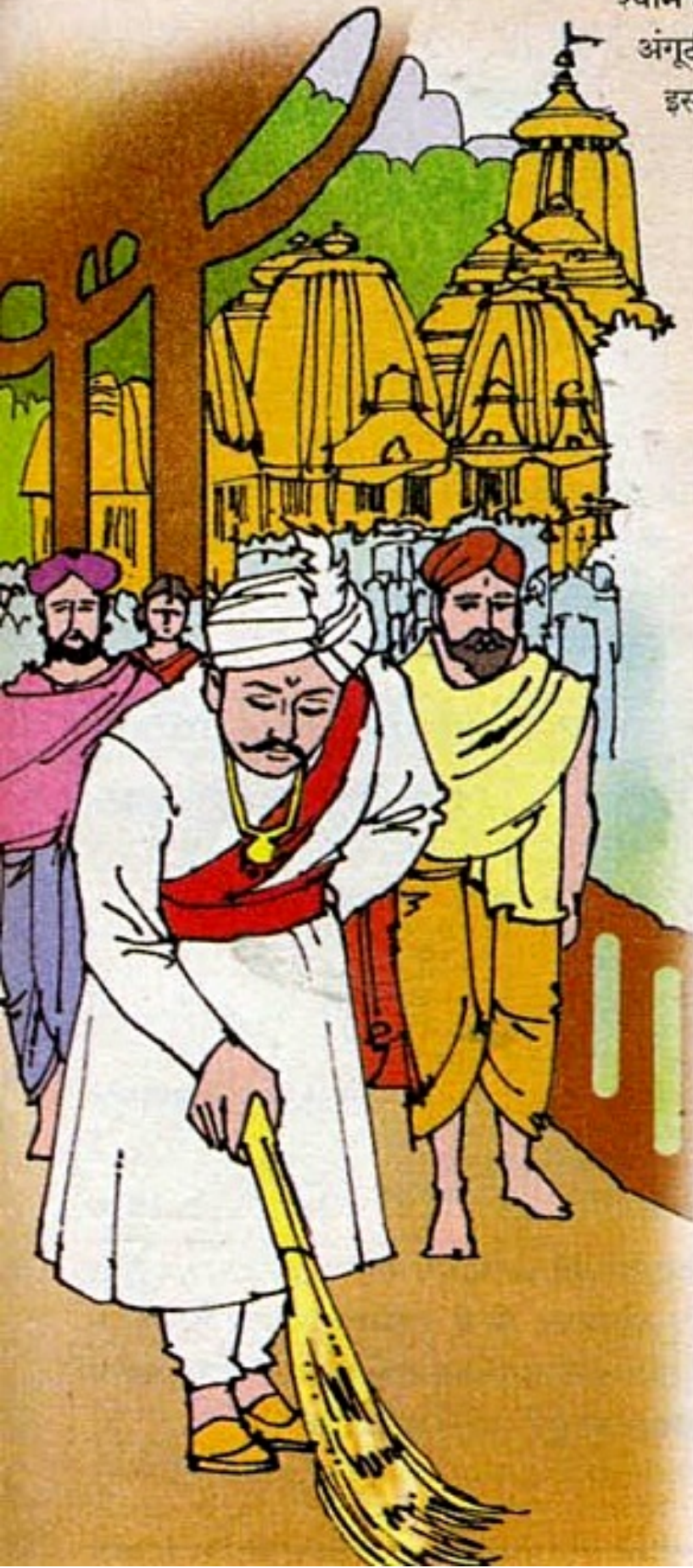
किया। राजा ने खड़ा हो पीछे मुड़कर देखा। उसका पुराना वृद्ध मंत्री उसे देख मुस्कुरा रहा था। दूसरे क्षण, उसका संकेत पाकर घूंघट डाले एक युवती ने आकर राजा के गले में माला डाल दी।

"महाराज, आपने मुझे राजकुमारी पद्मावती के साथ विवाह के लिए एक भंगी की तलाश करने का आदेश दिया था। क्या इस समय आप भंगी नहीं हैं? मुझे पद्मावती के लिए पूरी पृथ्वी पर आपसे अधिक योग्य भंगी और कहाँ मिलेगा?" युवा राजा का मुख लज्जा से लाल हो गया। बुद्धिमान मंत्री के आदेश पर उसने भी पद्मावती को माला पहनाई। वह कलिंग की रानी बनी।

उड़ीसा पर्यटन - कार्यक्रमों की सूची (जुलाई-दिसम्बर-२००३)

मेले/पर्व का नाम	दिनांक	महत्वपूर्ण समारोह-स्थल
स्नान यात्रा	१४ जून	पुरी
रथ यात्रा	१ जुलाई	पुरी, केन्द्रपारा, बारीपद
बहुधा यात्रा	९ जुलाई	पुरी, केन्द्रपारा, बारीपद
दुर्गा पूजा	२-५ अक्तूबर	कटक
गजलक्ष्मी पूजा (कुमार पूर्णिमा)	९ अक्तूबर	डेंकानल शहर
अनल नवमी	२ नवम्बर	सखीगोपाल
बड़ा ओशा	७ नवम्बर	धवलेश्वर
बाली यात्रा	८ नवम्बर	कटक, पारादीप, कोर्णाक, बालू गाँव
परब (आदिवासी पर्व)	६-१८ नवम्बर	कोरापुट
बीच पर्व	२३-२७ नवम्बर	पुरी
कोणार्क नृत्य पर्व	१-५ दिसम्बर	कोर्णाक

पुरी कैसे पहुँचें : *जगन्नाथ मंदिर के लिए प्रसिद्ध पुरी और वार्षिक रथ यात्रा सड़क द्वारा भुवनेश्वर से ६० कि.मी. तथा कोणार्क से ३५ कि.मी. है। कोलकाता, दिल्ली, अहमदाबाद तथा तिरुपति से यहाँ तक सीधा रेलमार्ग है। विस्तृत जानकारी तथा आवास सुविधा के लिए सम्पर्क करें - उड़ीसा पर्यटन विकास निगम (ओ टी डी सी), पंथनिवास या पुरी पर्यटन कार्यालय।*

Rathayatra

1ST JULY, 2003

THE EXPERIENCE OF A LIFETIME.

impact_creative@yahoo.com

Welcome to the grand roadshow. Welcome to the frenzy, the ecstasy and the grandeur that is Rathayatra. It throws up a vibrant and captivating display of age-old tradition, mythology, culture and lore of Orissa. The divine journey proceeds down Puri's broadway every year with the idols of Lord Jagannath, His brother Balabhadra and His sister, Subhadra travelling in three gigantic chariots, borne on 16 enormous wheels. Millions of devotees heave at the ropes to draw their Gods' chariots. This 1st July, 2003 the divine rathas will roll out again in their full regalia. Be at Puri to witness this magnificent pageant of life!

For more information contact : Director, Tourism; Paryatan Bhavan; Bhubaneswar 751014 Ph. : (0674) 432177, Fax : (0674) 430887 e mail : ortour@sancharnet.in website : orissa-tourism.com

Chennai : Tamilnadu Tourism Complex, Gr. floor, Near Kalaivanar Arangam, Wallajah Road, Chennai 600002, Telefax: (044) 5360891

Kolkata: Utkal Bhavan, 55 Lenin Sarani, Pin : 700013, Ph. : (033) 22443653, New Delhi : Utkalika, B/4 Baba Kharak Singh Marg, Pin : 110001, Telefax: (011) 23364580.

समाचार झलक

कुत्तों के लिए स्पा

टोकियो के पालतू कुत्तों के मालिकों का इस बात पर विशेष ध्यान है कि उनके पालतू जानवर मोटे न हो जायें! कुछ उद्यमी व्यक्ति कुत्तों के लिए हेल्थ स्पा खोलकर उनकी सहायता कर रहे हैं। उनमें पाँव चक्की और जकुज़ी की भी सुविधा है। पाँव चक्की पर दौड़ने के बाद, ये श्वान बुलबुलेदार जकुजी में बहुत देर तक डूबे रहते हैं जिससे इन्हें आरोग्यकर स्नान का लाभ मिलता है। इसके बाद इन्हें खुशबूदार पानी से नहलाया जाता है और तत्पश्चात चायपत्ती और साइप्रस का तेल लगाया जाता है। सच है, हर कुत्ते के दिन फिरते हैं।

बारह घण्टों में किताब तैयार !

विश्व पुस्तक दिवस २३ अप्रैल को जर्मनी की एक प्रकाशन कम्पनी ने इतिहास रच दी। प्रातः ७.४५ पर ४० लेखकों को एक विषय देया गया; १२ घण्टों के बाद शामको ७.४५ पर पुस्तक की प्रतियाँ विक्रय और वितरण के लिए १० शहरों में पहुँच गईं। उन १२ घण्टों में पुस्तक लिखी गई, कम्पोज की गई, मुद्रित की गई और उन पर जिल्द चढ़ाई गई। भूमिका के साथ पुस्तक में १०० पृष्ठ हैं। इस साहसिक प्रयास के पीछे काम करनेवाली संस्था, स्टिफटुंग लेसेन, लोगों में पढ़ने की आदत को विकसित करना चाहती है और विश्व रेकॉर्ड बनाने की ज्यादा परवाह नहीं करती।

मेघालय की एक लोक कथा

मेघालय, जिसका अर्थ है बादलों का घर, प्रकृति का एक वरदान है। उपहिमालयीय क्षेत्र में बसा इस राज्य में प्रचुर वर्षा और धूप, ऊँची उपत्यकाएँ, नीचे उतरते जल प्रपात, स्वच्छ नदियाँ और बल खाते नाले हैं।

मेघालय उत्तर और पूरब में आसाम से तथा दक्षिण और पश्चिम में बांग्लादेश से घिरा हुआ है। आसाम से काटकर इसे २१ जनवरी १९७२ में पूर्ण स्तरीय राज्य का दर्जा दिया गया।

यहाँ की राजधानी शिलांग सन् १९७२ तक आसाम की राजधानी थी। यह हमेशा अंगरेजों का ग्रीष्म कालीन विश्राम स्थल रहा। यह समुद्रतल से १४९६ मीटर की ऊँचाई पर बसा हुआ है। इसे इसकी ऊँचाई के कारण 'पूरब का स्कॉटलैंड' भी कहते हैं।

मेघालय की आबादी २३ लाख ६ हजार ६९ है और यहाँ का क्षेत्रफल २२ हज़ार वर्ग किलोमीटर है। मुख्य भाषाएँ हैं - खासी, गारो तथा अंगरेजी जिसका प्रयोग सभी सरकारी पत्र व्यवहार के लिए किया जाता है।

सूअर ने बाघ को ललकारा

सूअर को आम तौर पर बहुत गन्दा माना जाता है। लेकिन वे प्राचीन काल में ऐसे नहीं थे। वे भी जंगल के अन्य जानवरों के समान साफ-सुथरे थे। सूअर कैसे गन्दे बन गये, इसकी एक बड़ी रोचक कहानी है।

मेघालय के जंगलों में सभी जानवर सामंजस्य और शान्तिपूर्वक रह रहे थे। जंगल में सभी जानवरों के लिए काफी भोजन था।

एक दिन बाघ शिकार के लिए निकला। उसे कई जानवर मिले और उसने भर पेट भोजन किया। तब वह पानी की खोज में निकला। बहुत देर के बाद उसे एक पोखरा मिला और पानी पीने के लिए वह उसके निकट गया।

तभी उसी समय एक छोटा सूअर धूप और कीचड़ में बहुत देर तक खेलने के बाद पोखरे से पानी पी रहा था। बाघ को देखकर भय से वह जम गया। वह बहुत डर रहा था और उसे बचने का कोई उपाय नहीं सूझ रहा था।

लेकिन बाघ ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। वह बहुत प्यासा था। वह नीचे झुका लेकिन तुरंत पीछे हट गया। पानी गन्दा था और उससे भयानक बदबू आ रही थी। सूअर के बच्चे के शरीर के कीचड़ से पानी गन्दा हो गया था। दुर्गन्ध इतनी तेज़ थी कि दूसरे जलाशय की खोज में बाघ वहाँ से चला गया।
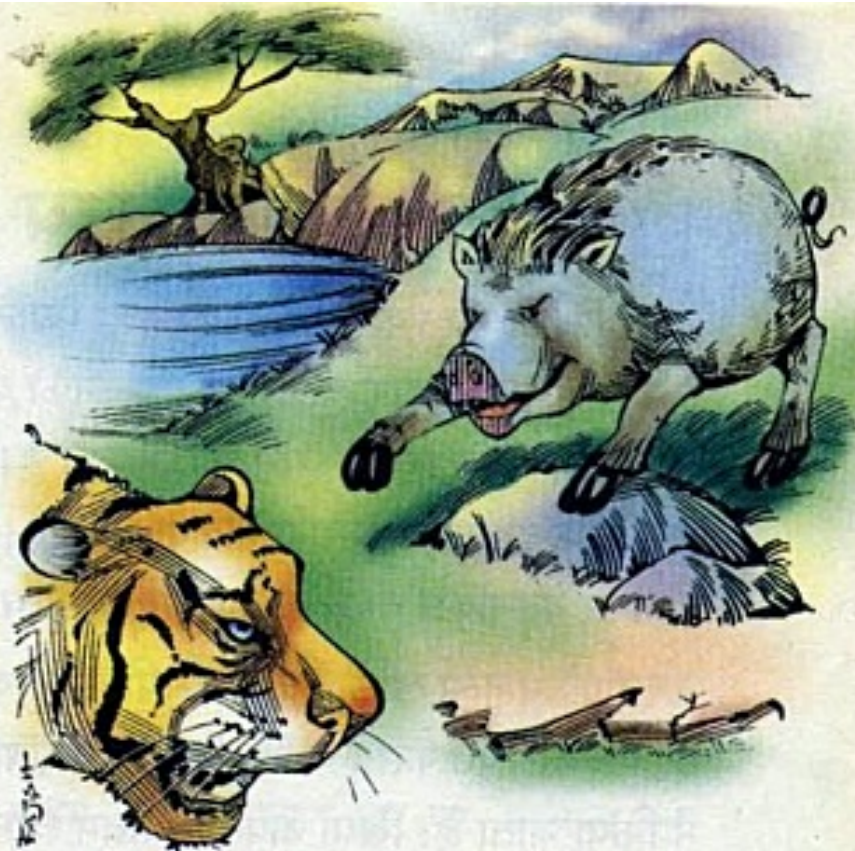
अब सूअर का बच्चा पहले तो बाघ के व्यवहार से चकित रह गया। लेकिन तेज़ घेंटा ने यह समझा कि बाघ उससे डर गया। नहीं तो बाघ इतनी जल्दी वहाँ से क्यों भाग जाता?

छोटा सूअर अब अपने को हाथी-सा बलवान समझने लगा। वह बाघ का पीछा करने लगा और उसे चुनौती दी, ''हे, वापस आओ और मुझसे लड़ो, कायर कहीं के! भागो नहीं।''

वहाँ के निवासी

मेघालय असाधारण रूप से विविध समुदायों का घर है। प्रधान आदिवासी हैं - खासी, गारो और जयन्तीया। उनमें भिन्न-भिन्न प्रकार की विशिष्टताएँ हैं।

बुनाई इन आदिवासियों का प्राचीन हस्तशिल्प है। ये कपड़े और बेंत की बुनाई करते हैं। खासी लोग बेंत, चटाई, टोकरी और स्टूल की बुनाई के लिए प्रसिद्ध हैं। गारो और जयन्तीया समुदाय के लोग कपड़े की बुनाई के लिए प्रसिद्ध हैं।

लोक नृत्य

वांग्ला अथवा एक सौ ढोलों का नृत्य मेघालय के गारो आदिवासी के लिए एक महत्वपूर्ण घटना है। यह उनकी कठिनाइयों के अंत का संकेत है। यह अच्छी फसल का अग्रदूत है। नृत्य हमेशा नवम्बर महीने में सत्योंग अथवा उर्वरता के देवता के सम्मान में किया जाता है। बूढ़े और जवान रंगारंग पोशाक में पंखयुक्त टोपी पहनकर बेलनाकार ढोलों के ताल पर यह नृत्य करते हैं।

नॉगक्रेम नृत्य खासी आदिवासियों का नृत्य है जो अक्तूबर या नवम्बर महीने में किया जाता है। यह भरी-पूरी फसल के लिए प्रभु को धन्यवाद ज्ञापन का भी उत्सव है। यह नृत्य खुले मैदान में किया जाता है। स्त्रियाँ अपनी सर्वोत्तम रेशमी पोशाक में सोने, चाँदी और मूंगा के गहनों से अलंकृत भीतरी घेरे में नाचती हैं जबकि पुरुष उनके साथ बाहरी घेरे में नृत्य करते हैं। वे बांसुरी और ढोल के संगीत पर नाचते हैं।

बाघ लड़ने के मनोभाव में नहीं था। वह अत्यन्त प्यासा था और उसे पानी की सख्त जरूरत थी। वह गुर्राया, ''मैं आज तुमसे नहीं लड़ूँगा। कल इसी समय यहाँ आना और तब हम दोनों लड़ेंगे। सूअर का उत्साह आसमान छूने लगा। उसे लगा कि दुनिया उसके पैरों के तले है।

वह तेजी से घर गया और अपने दोस्तों और संबंधियों के सामने डींग मारने लगा, ''बाघ हमसे डरता है। मैं जंगल का होनेवाला राजा हूँ!''

उसने अपने परिवार के सभी सदस्यों को बुलाया और उन्हें पूरी घटना का विवरण सुनाया। वे केवल उसके व्यवहार से भयभीत हो गये। उन्होंने अनुमान लगाया कि क्यों बाघ ने जलाशय से पानी नहीं पीया और जल्दी से वहाँ से चला गया। उन्होंने सूअर को उसकी मूर्खता के लिए डाँटा।

सूअर के बच्चे ने महसूस किया कि बाघ को ललकार कर उसने कितनी भारी भूल कर दी।

अब वह भयभीत था। उसने सोचा कि दूसरे दिन सुबह उसकी जान चली जायेगी और वह बाघ का अच्छा खासा भोजन बन जायेगा।

सूअर का दादा अपने पोते के दुख पर तरस खा गया। उसने उसकी जान बचाने के लिए कुछ करने का निश्चय किया। उसने एक योजना बनाई। उसने तब अपने पोते से कहा, ''बादे के अनुसार कल सुबह बाघ से मिलो। नहीं तो वह यहाँ आ जायेगा और हम सबका संहार कर देगा। लेकिन उससे मिलने से पहले गन्दगी में खूब लोट लो, ताकि तुमसे बहुत बदबू आये।''

अगले दिन सुबह छोटू सूअर अपने दादा की सलाह के मुताबिक गन्दगी, कीचड़, हाथी की लीद और जो भी जंगल में गन्दी चीज मिली उसके ढेर पर खूब लोटा। उसके बाद वह बाघ से मिलने गया।

बाघ सूअर का बेसब्री से इन्तजार कर रहा था। वह सूअर से लड़ने के बाद उसे दिन का भोजन बनाने का सपना देख रहा था।

जब सूअर उसके निकट पहुँचा तो बाघ तुरंत पीछे हट गया। ''यह सब क्या है? तुमसे तो भयंकर बदबू आ रही है! उफ!!''

''मैं तो यहाँ तुम्हारे निर्देश के अनुसार तुमसे लड़ने के लिए आया हूँ। मैं अपने दादा के बताये कुछ प्रक्षेपण विधि का अभ्यास कर रहा था।'' सूअर ने बाघ के और समीप आते हुए कहा।

बाघ दुर्गन्ध को और न सह सका। उसका जी मिचलाने लगा।

''चले जाओ। मेरे करीब मत आओ,'' बाघ गुर्राया।

सूअर ने अनिच्छुक होने का बहाना बनाया, ''लेकिन लड़ने का क्या हुआ,''उसने पूछा।

''भागो यहाँ से। मैं तुमसे नहीं लड़ता।'' बाघ बदबू से पीछे हटते हुए गरजा।

छोटा सूअर खुशी से बाघ को छोड़कर चला गया। घर लौटने पर छोटू सूअर और उसके परिवार ने महसूस किया कि गन्दगी से उसे सहायता मिली। उस दिन से वे सब घर से निकलने से पहले गन्दगी पर लोटने लगे। वे आज भी वैसा ही कर रहे हैं।

(विद्याराज द्वारा पुनर्वर्णित)

बदला भाग्य

हेलापुर के बलभद्र और बलराम युवा हैं और बचपन से ही अच्छे दोस्त हैं। दोनों मध्यम वर्ग के हैं। दोनों में बड़ा बलभद्र शांत स्वभाव का है। और बड़ा ही सुशील है। पर बलराम का स्वभाव इसके बिलकुल विपरीत है। परिचित हो या अपरिचित वह सबका मजाक उड़ाता रहता है, उनके दिल को ठेस पहुँचाने में कोई संकोच नहीं करता। वह इसका पूरा-पूरा मज़ा लेता है।

उन्हें मालूम हुआ कि उस साल राजधानी में राजा का जन्म-दिनोत्सव बहुत बड़े पैमाने पर मनाया जानेवाला है। दोनों यह उत्सव देखने राजधानी चल पड़े। निकलने के पहले बलराम ने बलभद्र से कहा, ''लंबे अर्से के बाद राजधानी जा रहे हैं। रास्ते में पता नहीं, कितनी विचित्रताएँ देखने को मिलेंगी। जो भी हो, लोगों को इस बात का पता न चले कि हम कौन हैं और हमारे क्या नाम हैं। याद रखोगे न?''

बलभद्र उसकी बातों पर चकित तो हुआ, फिर भी ''हाँ'' भाव में सिर हिला दिया। दुपहर होते-होते वे दोनों सुगंधपुर की सरहद पर पहुँचे। उन्हें बड़ी भूख लग रही थी। वे पास ही की एक झोंपड़ी में गये। वहाँ एक बुढ़िया रहती थी, जिसका इस दुनिया में अपना कोई नहीं था।

बलभद्र ने उससे कहा, ''दादी, हम राजा का जन्म-दिनोत्सव देखने राजधानी जा रहे हैं। बड़ी भूख लगी है। खाना मिलेगा? तुम्हें इसके लिए थोड़ी-बहुत रक़म भी देंगे।''

''क्यों नहीं बेटे, थोड़ी देर आराम करना,'' कहकर बुढ़िया रसोई बनाने लग गयी और दस-पंद्रह मिनटों के बाद खाना परोस दिया।

- लक्ष्मण सूरि -

हाथ-पाँव धोकर दोनों खाने बैठ गये। बुढ़िया की पकायी तरकारियाँ बड़ी ही स्वादिष्ट थीं। उन दोनों ने जमकर खाया।

वहाँ से निकलने के पहले बलभद्र ने बुढ़िया के हाथ में कुछ अशर्फ़ियाँ थमाते हुए कहा, ''बड़ा ही स्वादिष्ट भोजन खिलाया। जो भी दें, तुम्हारा कर्ज़ हम चुका नहीं सकते। पर लो, ये चंद अशर्फ़ियाँ।''

इस पर बुढ़िया ने कहा, ''भूखे को अन्न खिलाने से बढ़कर पुण्य और क्या हो सकता है? छोडो, ये बातें! बहुत दिनों से मुझे एक चिंता खाये जा रही है।''

''बोलो दादी, क्या बात है? किस बात की चिंता है?'' बलभद्र ने पूछा।

''इधर कुछ दिनों से मेरी कमर में बड़ा दर्द हो रहा है। उसकी बजह से मुझे बड़ी परेशानी हो रही है। किसी वैद्य से चिकित्सा कराना मेरे बस की बात नहीं है। इतनी बडी रक़म कहाँ से लाऊँगी। इस दर्द को दूर करने का कोई नुस्खा हो तो बताना बेटे,'' बुढ़िया ने पूछा।

बलराम को बुढ़िया का मज़ाक उड़ाने का अच्छा मौक़ा मिल गया। वह कहने लगा, ''तुम्हारे दर्द को दूर करने का उपाय मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। तुम्हारी झोंपडी के पिछवाड़े में इमली का जो पेड है, उस पेड़ की टहनी में एक रस्सी बाँध दो। फिर उस रस्सी के सिरे को अपनी कमर में बाँध लो। दस बार इधर-उधर झूलती रहो। ऐसा करोगी तो तुम्हारी कमर का

दर्द ज़रूर दूर हो जायेगा। ऐसा करने के बाद भी दर्द कम नहीं हुआ तो एक दूसरा नुस्खा भी है। उस पेड़ के पास ही एक गड्ढा खोदो। मिट्टी गले तक भर लो और चार घंटे वहीं खड़ी रहो। इससे सौ फ़ी सदी दर्द कम होकर रहेगा।''

''बेटे, लगता है, तुम्हारा नुस्खा कमाल का है। दर्द कम हो जाए तो तुम्हारा ही नाम लूँगी। बताना तो सही, तुम्हारा नाम क्या है?''

बलराम ने बिना सकपकाये कह दिया, ''मेरा नाम बलभद्र है। हम हेलापुरी के हैं। शिवशास्त्री तालाब के पास ही मेरा घर है।''

बलराम का यह मज़ाक बलभद्र को अच्छा नहीं लगा। उसने सोचा कि बुढ़िया बलराम की बातों का विश्वास नहीं करेगी और उसके नुस्खे को मज़ाक समझकर अमल में नहीं लायेगी।

फिर दोनों राजधानी पहुँचे और राजा के जन्म-दिनोत्सव के जलबे देखकर हेलापुरी लौटे।

दस साल देखते-देखते यों गुज़र गये। एक दिन बलभद्र और बलराम गाँव के बीचों बीच चबूतरे पर बैठकर बातें कर रहे थे। उस समय वहाँ और लोग भी बैठे हुए थे। तभी एक नया आदमी वहाँ आया और पूछने लगा, ''आप बता सकते हैं, इस गाँव के बलभद्र का घर कहाँ है?''

''मैं ही बलभद्र हूँ। आप कौन हैं? बात क्या है?'' बलभद्र ने पूछा।

वह आदमी सुंगधपुर से आया था। सुगंधपुर में रहनेवाली एक बुढ़िया ने अपनी सारी जायदाद - बीस हज़ार अशर्फ़ियाँ, पाँच एकड़ उपजाऊ खेत, पक्की छतवाला एक घर-शिवशास्त्री तालाब के पास रहनेवाले बलभद्र के नाम कर दिया। सुगंधपुर के ग्रामाधिकारी ने इस आदमी के ज़रिये ख़बर भिजवायी कि वह उनके गाँव आये और पूरी जायदाद अपने अधीन कर ले।

यह जानकर बलभद्र और बलराम चकित रह गये। उन्हें वह बुढ़िया तुरंत याद आयी। उनकी समझ में नहीं आया कि उस बुढ़िया को इतनी बड़ी जायदाद कहाँ से मिल गयी।

वे तुरंत सुंगधपुर गये और ग्रामाधिकारी से मिले। तभी जाकर उन्हें मालूम हुआ कि यह सब कैसे संभव हो पाया।

बलभद्र के बताये नुस्खे के मुताबिक बुढ़िया ने अपनी कमर का दर्द दूर करने के लिए इमली के पेड़ की टहनी में रस्सी बाँधी, उसके सिरे

को अपनी कमर में बाँध लिया और झूलने लगी। उस समय उस सूखे पेड़ के कोटर से अशर्फ़ियों की बारिश होने लगी, जो शायद उसके पूर्वजों की छिपायी धन-राशि थी। इस नुस्खे से उसकी कमर का दर्द कम नहीं हुआ तो वह बलभद्र का दूसरा नुस्खा प्रयोग में ले आयी। उस नुस्खे के मुताबिक वह गड्ढा खोदने लगी तो उसमें उसने अशर्फ़ियों से भरा तांबे का एक घड़ा पाया।

यों बुढ़िया संपन्न हो गयी और उसने एक योग्य व समर्थ वैद्य से अपनी कमर के दर्द की चिकित्सा करवायी। फिर उसने बढ़िया घर बनवाया, खेत खरीदा और नौकर भी रख लिये। कुछ समय तक उसने आराम-से ज़िन्दगी गुज़ारी। हाल ही में उसकी मौत हो गयी। चूँकि उसका कोई बारिस नहीं था, इसलिए उसने अपनी सारी जायदाद बलभद्र के नाम कर दी, क्योंकि उसका समझना था कि इस भाग्य का मूल वही है।

बलराम ने जान-बूझकर बुढ़िया को तंग करने और उसका मज़ाक उड़ाने के लिए अपना नाम बलभद्र बताया। अब भाग्य ने यों उसे वर लिया।

बलभद्र को लगा कि इस जायदाद का असली बारिस तो बलराम है। उसने यह सच्चाई ग्रामाधिकारी से बतायी और कहा कि यह जायदाद बलराम को सौंप दी जाये।

ग्रामाधिकारी ने ऐसा करने से इनकार किया और कहा, ''मरनेवाले जो वसीयत लिख जाते हैं, उसमें कोई अदला-बदली नहीं हो सकती। ऐसा करना क़ानून के खिलाफ़ है।'' उसने नियमानुसार पूरी जायदाद बलभद्र को सौंप दी।

बलराम चिंता-ग्रस्त होकर यह सब कुछ देख रहा था, तब बलभद्र ने उसे आश्वासन देते हुए कहा, ''चिंतित न होना। तुम्हारे मज़ाकिये स्वभाव के कारण भलाई और बुराई दोनों हुई हैं। अंतिम दिनों में ही सही, बुढ़िया सुखी रही। यह हमारा बदला भाग्य है। आगे से ही सही, सबके साथ अच्छा बर्ताव करना, सबकी इज़्ज़त करना।'' फिर उसने संपत्ति का आधा भाग बलराम के नाम कर दिया।

अपने भारत को जानो

१. हिन्दू पुराण शास्त्र के अनुसार 'देवताओं का गुरु' कौन है?
(अ) शुक्राचार्य
(ब) द्रोणाचार्य
(स) बृहस्पति
(द) वेदव्यास

२. किस भारतीय विद्वान को पाइ (Pi) के आधुनिक मूल्य के परिकलन का श्रेय प्राप्त है?
(अ) आर्य भट्ट (ब) भवभूति
(स) वराहमिहिर (द) भास्कराचार्य

३. पूसा इन्स्टिट्यूट किस विषय से संबंधित है? यह एक विख्यात संस्था का लोकप्रिय नाम है।
(अ) खगोल विज्ञान
(ब) गणित शास्त्र
(स) कृषि विज्ञान
(द) सांख्यिकी

४. यह चित्र उत्तर भारत स्थित एक विश्वविद्यालय के संस्थापक का है। कौन है वह? विश्वविद्यालय का नाम बताओ।

५. थॉम्पसन कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग अब एक सुख्यात विश्वविद्यालय है। कौन-सा है वह?
(अ) अन्ना विश्वविद्यालय
(ब) यादव विश्वविद्यालय
(स) रुड़की विश्वविद्यालय
(द) काकातिया विश्वविद्यालय

६. मानव विज्ञान के साथ भारत में तुम किस व्यक्ति का नाम जोड़ना चाहोगे?
(अ) डॉ. ए. लक्ष्मणास्वामी मुदलियार
(आ) डॉ. एल.के. अनन्तकृष्ण अय्यर
(स) डॉ. अमर्त्य सेन
(द) डॉ. आशुतोष मुखर्जी

(उत्तर अगले महीने)

जून प्रश्नोत्तरी के उत्तर

१. (स) दक्कन रानी
२. (अ) गोल गुम्बज़
३. (स) हैदराबाद
४. सर एडमण्ड हिलैरी जो तेनजिंग नॉर्गे के साथ एवरेस्ट पर पहली बार २९ मई, १९५३ को चढ़ा।
५. मेट्टूपालयम और ऊटी (उदगममण्डलम) के बीच पर्वतीय रेलवे लोको इंजिन द्वारा, न कि डिज़ल/विद्युत इंजिन द्वारा चालित होता है, जैसा कि चित्र में दर्शाया गया है।
६. (ज) भोलू

विघ्नेश्वर

गुफा के द्वार पर ढके पहाड़ जैसी शिला को गजराज ने अपनी सूंड से एक कंकड़ की तरह हटा दिया। फिर गुफा के अंदर चला गया। इसके बाद थोड़ी ही देर में रत्नाभूषणों के बण्डलों को अपनी सूंड से उठा लाया और सौदामिनी के सामने ढेर लगा दिया। चन्द्रहार और मालाएँ उसके गले में पहना दीं, इसके बाद उसकी पीठ पर अपना सूंड ऐसा फेरा जैसे पिता बेटी की पीठ पर प्यार से थपथपी देता है। बाकी गहने पहनकर बचे गहनों को घर ले जाने के लिए हाथी ने इशारे से सौदामिनी को बतला दिया। तब हाथी ने उसे जंगल पार करा कर कल्याणी नगर के समीप छोड दिया और फिर वह जंगल की ओर लौट पड़ा।

सोने के आभूषणों से लदकर सोने की मूर्ति जैसी चमकनेवाली अपनी बहू को देख कलह कंठी चकित रह गई। फिर संभलकर उन गहनों को पाने का तरीक़ा सौदामिनी के मुँह से कहलवाया तथा मन में सोचा, "ओह, हाथी को कैथे के फल इतने प्यारे हैं!" वह उसी वक़्त हाट में जाकर थैला भर कैथा ख़रीद लाई।

गहने भर कर लाने के लिए कलह कंठी ने एक बोरा अपने कंधे पर डाल लिया और एक हाथ में कैथे की थैली लेकर जंगल की ओर ख़ुशी के साथ चल पड़ी। जंगल में पहुँचकर उसने सारे प्रदेश को छान डाला कि कहीं उसे कैथे का पेड़ दिखाई दे, मगर उसे कहीं कैथे का पेड़ दिखाई नहीं दिया। आख़िर एक इमली के पेड के नीचे लुढ़क पड़ी और खाने के लिए थैली से एक कैथा निकाला। उसे हाथ में उठाये गला संवार कर

भजन-कीर्तन गाने लगी,

''हाथी-हाथी आ जाओ।
कैथे के फल खाते जाओ।
गहने सोने के लेते आओ।
साध मेरे मन की पूरी करते जाओ।
हाथी-हाथी आ जाओ।
जल्दी-जल्दी आ जाओ॥

कलह कंठी गाती जाती थी, पर हाथी न आया, बल्कि जंगल को गुंजाते हुए भयंकर ध्वनि सुनाई दी। कलह कंठी ने सोचा कि शायद यही हाथी का चिंघाड़ है। उसने गर्दन लंबी करके देखा, एक बाघ छलांग मारते उसी ओर चला आ रहा था।अपने कंधे पर के बोरे को छोड़े बिना भागते-भागते वह नीचे गिर पड़ी। क़िस्मत से वह गुफा के सामने ही गिरी। अपनी क़िस्मत पर फूली न समाती वह गुफा के भीतर चली गई।

गुफा के अंदर गहनों के ढेर के ढेर देख पागल की तरह वह सारे गहने पहनती गई। गहनों से बोरा भर दिया, उसे बड़ी मुश्किल से ढोते हुए गुफ़ा के फाटक के पास पहुँची, लेकिन दुर्भाग्य से गुफा का फाटक बंद था। सामने चमकनेवाली लाल-लाल आँखों से घूरते अंधेरे में अट्टहास करती हुई एक ब्रह्म राक्षसी वहाँ खड़ी थी।

राक्षसी गुफा को कंपाते हुए गरज उठी, ''ओह कलह कंठी, तुम अपनी बहू को सताने वाली सास हो तो मैं सास को सता कर खा जानेवाली बहू हूँ। मेरी कहानी सुनो !'' इन शब्दों के साथ राक्षसी ने अपना वृत्तांत सुनाना शुरू किया :

''मैं पहले बड़ी रूपवती थी। माँ-बाप ने मेरा नामकरण कलहंसी किया था। मगर ससुराल में जाने के बाद मैं अपनी वाचालता से उस सारे मुहल्ले में कलह दुंदुभी नाम से मशहूर हो गई। कलह कंठी, तुम जितनी क्रूर हो, मेरी सास उतनी ही साधु प्रकृति की एक दम साध्वी थी।

''मेरे ससुराल में जाने के बाद एक साल के अंदर मेरे पति घर छोड़कर देशाटन पर चले गये। इस बात से तुम अंदाजा लगा सकती हो कि मैं कैसी उत्तम नारी हूँ। मैं आभूषणों पर जान देती हूँ। सोना उगलनेवाले अच्छे खेतों और बनों को बिकवा कर मैंने गहने बनवा लिये। मेरी सास ने भी अपने सारे गहने मुझे दे दिये। ऐसी भोली भाली और उत्तम स्वभाव वाली सास को मैंने एक जून भी ठीक से खाना नहीं दिया। दुबली-पतली बूढ़ी सास से घर की चाकरी करवाई।

''आख़िर मेरे सास-ससुर मेरी करनी से ऊब गये और वातापि क्षेत्र में जाकर विघ्नेश्वर के दर्शन करके वहीं पर अपना देह-त्याग करने के ख्याल से घर से चल पड़े। मेरी सास के हाथ में छोटी सी गठरी देख मैंने ज़बर्दस्ती उसे खींच लिया, जिससे वह लुढ़ककर गिर पडी और सदा के लिए वहीं पर अपनी आँखें मूंद लीं।

''मेरे ससुर बड़ी सहनशीलता के साथ मेरे दुर्व्यवहारों को देखते हुए चुप रहते थे, मगर उस दिन वे बड़े दुखी हुए और गुस्से में आकर बोले, 'अरी दुष्टे, तुम मेरी बहू हो। वरना मैं इसी वक़्त तुम को शाप दे देता। इस ख़्याल से हम तुम्हारे सारे दुर्व्यवहारों को सहते रहे कि हमारा इकलौता बेटा कभी न कभी लौट आयेगा और तुम उसको सुखी रखोगी। मैं आखिरी बार तुमसे यही चाहता हूँ कि मेरा बेटा कभी लौट आएगा तो उसकी अच्छी तरह से देखभाल करो।' यों समझाते हुए मेरे ससुर ने भी वहीं पर अतिशय दुख के मारे अपने प्राण त्याग दिये और अपनी पत्नी के साथ सहगमन किया।

''उसी वक़्त वहाँ पर एक संन्यासी आया, वह मेरे सास-ससुर की मृत देहों पर गिरकर रोने लगा। इसके बाद मैंने अपनी सास के हाथ से जिस गठरी को खींच लिया था, उसे खोला। उसके भीतर दो-चार चिथड़े मात्र थे।

''उस संन्यासी ने मेरी तरफ़ अपनी लाल-लाल आँखों से देखकर कहा, 'तुम्हें तो एक ब्रह्मराक्षसी के रूप में पैदा होना था।' इसके बाद उस वृद्ध दंपति के अंतिम संस्कार करके वहाँ से चला गया। वह संन्यासी कोई और न था। मेरे रूप-सौंदर्य पर मुग्ध होकर मेरे साथ विवाह करनेवाले मेरे पति थे।''

यों अपनी कहानी सुनाकर वह थोड़ी देर रुक गई, फिर शेष कहानी सुनाने लगी : ''गहनों के प्रति मेरी आसक्ति और लोभ ने मुझे यहाँ तक प्रेरित किया कि मैंने कुछ लुटेरों को आश्रय दिया। मैं डाकुओं की रानी कहलाने लगी। इसी गुफा में चोर-डाकू अमूल्य गहने व धन के ढेर लगा देते थे। उस सारी संपत्ति पर क़ब्जा करने के ख़्याल से मैंने उन्हें जहर मिलाया हुआ ख़ाना खिला दिया। मरने के पहले उन लोगों ने बदला लेने के लिए मुझे गुफा के अन्दर रखकर भारी चट्टान से इसके द्वार को बंद कर दिया।

''कलह कंठी ! मैं इसी गुफा में उन गहनों व

धन के ढेरों को देखते भूख-प्यास से तड़प-तड़प कर मर गई और पिशाचिनी बनकर पड़ी हुई हूँ। गुफा में प्रवेश करनेवाले हाथी ने मुझे बताया कि तुम्हारी आँखें खुलवाने पर मैं पिशाचिनी के जन्म से मुक्त हो जाऊँगी।

''हाथी ने तुम्हारी बहू को जो गहने दिये, वे सब खरे सोने के थे, मगर तुमने जो गहने पहन लिये हैं और बोरे में बांध लिये हैं, वे असली हैं या नकली, एक बार अच्छी तरह से देख तो लो।'' ब्रह्म राक्षसी ने कहा।

इस बीच बोरे का मुँह खुल गया और उसके भीतर से साँप-बिच्छू नीचे गिरे और गुफा के चारों तरफ़ रेंगने लगे।

अपने बदन पर साँप और बिच्छुओं के रेंगते देख कलह कंठी दहाड़ मारकर रोने लगी। उसकी आवाज़ से गुफा गूँ ज उठी। ब्रह्म राक्षसी ठहाके मारकर हँसती हुए बोली, ''तुम अपनी बहू के साथ अत्याचार करनेवाली कलह कंठी हो। मैं सास ससुर को सताने वाली कलह दुंदुभी हूँ। हमारी जैसी औरतों की वजह से नारी जाति पर अमिट कलंक लगता जा रहा है। उत्तम स्वभाव वाली अपनी बहू के साथ तुम अच्छा व्यवहार करोगी तो तुम्हारा कल्याण होगा, वरना इस गुफा में मेरे जैसे ब्रह्मराक्षसी बनकर पड़ी रहने की बारी तुम्हारी होगी। कलह कंठी, कान खोलकर सुन रही हो न?'' कलह दुंदुभी ने कहा।

इस पर कलहकंठी ने अपने कान पकड़ लिये। राक्षसी को प्रणाम करके विनयपूर्वक गिड़गिड़ाने लगी, ''मेरी अक़्ल ठिकाने लग गई है। मैं आज से अपनी बहू के साथ अच्छा व्यवहार करूँगी। मुझे गुफा से मुक्त करके जंगल पार करा दो।''

ब्रह्मराक्षसी ने कलह कंठी को जंगल पार कराकर कल्याणी नगर की सीमा पर पहुँचा दिया, तब उसने चेतावनी दी, ''सुनो, तुम अपना बचन भंग करोगी, तो ब्रह्म पिशाचिनी बनकर इसी गुफा में रह जाओगी, ख़बरदार।'' इसके बाद वह जल कर भस्म हो गई।

कलह कंठी दौड़कर अपने घर पहुँची, और सौदामिनी के सामने घुटने टेक कर बोली, ''बेटी, सौदामिनी, मुझे माफ़ कर दो। बेटे और बहू को तोते-मैने की तरह रहते देखकर खुश होने से बढ़कर मुझे और क्या सुख चाहिए?''

सौदामिनी यह सोचकर बहुत ख़ुश हुई कि विघ्नेश्वर की कृपा से उसकी सास का हृदय-

परिवर्तन हो गया है। इसके बाद कलह कंठी फिर से पहले की तरह कलकंठी कहलाई।

पावन मिश्र ने कहानी समाप्त करके पूछा, ''बच्चो, बताओ, हाथी कौन है?'' इस पर बच्चों के साथ बड़े लोग भी उत्साह में आकर बोल उठे, ''विघ्नेश्वर। हमारे विघ्नेश्वर।'' इन शब्दों के साथ सब उठ खड़े हुए और प्रसाद लेकर अपने-अपने घर चले गये।

पावन मिश्र प्रतिदिन मंदिर की दीवारों पर अंकित चित्रों से संबंधित कहानियाँ सुनाया करता जिससे बच्चों व बड़ों के मन में विघ्नेश्वर के प्रति विशेष श्रद्धा और भक्ति बढ़ती गई।

एक दिन एक संगीत प्रेमी ने एक भित्ति चित्र, जिसमें एक गायक तंबूरा बजाते गा रहा था और विघ्नेश्वर विभिन्न भंगिमाओं में नृत्य कर रहे थे, की ओर इशारा करके उस चित्र की कहानी सुनाने का अनुरोध किया।

पावन मिश्र ने यों शुरू किया, ''वातापि नगर कलाओं का केंद्र था जहाँ पर कवि, पंडित, गायक और विद्वान अधिक संख्या में बसे थे।

''गजानन पंडित नगर का श्रेष्ठ पंडित था, और बहुमुखी प्रतिभा का धनी भी। उसके कंठ में एक प्रकार की सम्मोहन शक्ति थी। वह वातापि गणपति पर असंख्य कीर्तन रचकर स्वयं गाया करता था। उसका नाता बाल गणेश भट्ट सर हिलाते ताल देता था।

''गजानन पंडित मधुर स्वर में 'धिमिकिट धिमिकिट तांडव नृत्य करी गजानन' नामक पल्लवि पर राग बदलते गाता जाता था, इस पर गजानन बने विघ्नेश्वर इंद्र धनुषी रंगों में अनेक

स्वरूप बदलते नाचते श्रोताओं तथा दर्शकों को मुग्ध कर देते थे।

''विघ्नेश्वर हंस ध्वनि के राग में सफेद राज हंस के जैसे, माया मालव राग में प्रातःकालीन रवि बिंब जैसे, भैरवी राग में लाल कमल जैसे, हिंदोल राग में नीलाकाश की भाँति, नीलांबरी राग में नीले कुमुद जैसे, आनंद भैरवी राग में सफ़ेद कुमुदों पर शोभायमान पूर्णिमा की चांदनी जैसे दिखाई देते थे।

''वैसे गजानन पंडित सत्कार और सम्मान पाने के पीछे पागल न था, फिर भी उसे सबसे बड़ा सम्मान सोने की गणेश की प्रतिमा हर साल समर्पित की जाती थी।

''देश के महान विद्वान भी गजानन पंडित के प्रति आदर का भाव रखते थे। मगर वातापिनगर के कुछ विद्वानों में उसके प्रति ईर्ष्या होने लगी। उनका नेता स्वरकेसरी था।

''स्वर केसरी सदा अपनी विद्वत्ता का परिचय देने को लालायित रहा करता था। अगर वह अपना कंठ खोलता तो सिंह गर्जन ही सुनाई देता। वह इस तरह गाता कि मृदंग बजाने वाला परेशान हो उठता। पर गजानन पंडित के मन में अपनी विद्वता का प्रदर्शन करने की कोई कामना न थी, वह विघ्नेश्वर के प्रति श्रद्धा व भक्ति से प्रेरित हो तन्मयावस्था में गाते-गाते कभी-कभी मूक हो जाता था। ऐसे संदर्भों में स्वर केसरी वगैरह पंडितों को गजानन पंडित की आलोचना करने का अच्छा मौक़ा मिल जाता था।

''वे कहा करते थे कि गजानन पंडित शास्त्र का ज्ञान नहीं रखता है, उसका संगीत केवल मनोधर्म संगति है, संयोग से प्राप्त संगीत है। पर गजाननं इस बात की बिलकुल परवाह नहीं करता था। अपने मन में रमे विघ्नेश्वर के साथ एकांत में वार्तालाप करते गाया करता था। उसके गायन में कोई अनिर्वचीय शक्ति थी जो श्रोताओं को दिव्य लोकों के आनंद सागर में डुबो देती थी।

''उस वर्ष किसी भी हालत में गणेश की स्वर्ण प्रतिमा गजानन पंडित के घर न पहुँचे, यों विचार करके स्वर केसरी ने एक योजना बनाई।''

युवरानी का चन्दामामा

बहुत पहले की बात है। राजस्थान के एक नगर में लीलावती नामक एक युवरानी रहा करती थी। वह आठ साल की थी। एक बार उसने कुछ अधिक मिठाइयाँ खा लीं। इससे उसकी तबीयत बिगड़ गयी।

राजवैद्य ने उसकी परीक्षा की। फिर उसने राजा को बुलवाया। राजा ने कमरे में क़दम रखते ही युवरानी को अपनी बाहों में ले लिया और घबराये हुए स्वर में उसने अपनी बेटी से पूछा, ''बेटी, तुम्हारी क्या कोई इच्छा है?''

''हाँ पिताजी, मुझे तुरंत चन्दामामा चाहिए। जैसे ही वह मुझे मिल जायेगा, मैं ठीक हो जाऊँगी। इस पलंग से उठकर चलने-फिरने लगूँगी।'' लीलावती ने मंद स्वर में कहा।

उन दिनों के शासक अहंभावी होते थे। वे थोड़ा-बहुत सनकी भी होते थे। जैसे ही बेटी ने चन्दामामा माँगा, राजा ने दंभ भरे स्वर में कहा, ''इस छोटी-सी बात पर बीमार पड़ गयी! समझ लो, चन्दामामा तुम्हारे हाथों में है।'' फिर उसने सेनापति को बुलवाया।

सेनापति के आते ही राजा ने कहा, ''युवरानी लीलावती चन्दामामा की माँग कर रही हैं। उसके मिलने पर ही उनकी तबीयत ठीक होगी। कल तक आपको किसी भी हालत में उसे ले आना होगा। यह मेरी आज्ञा है।''

''चन्दामामा!'' आश्चर्य प्रकट करते हुए सेनापति ने कहा, ''सरकार, अब तक युवरानी ने, जो-जो चाहा, लाकर दिया। हाथी के दांत, मोर, बंदर, रत्नमाणिक्य आदि जिन-जिनकी माँग इन्होंने की, पूरी की। पर चन्दामामा को ले आना मुझसे संभव नहीं। वह मेरे बस की बात नहीं है, क्योंकि वह हमसे पाँच हज़ार योजन की दूरी पर है। वह आकार में युवरानी के कक्ष से सात गुना बड़ा है। उसका निर्माण तांबे से हुआ है। ऐसे

- अरुंधति -
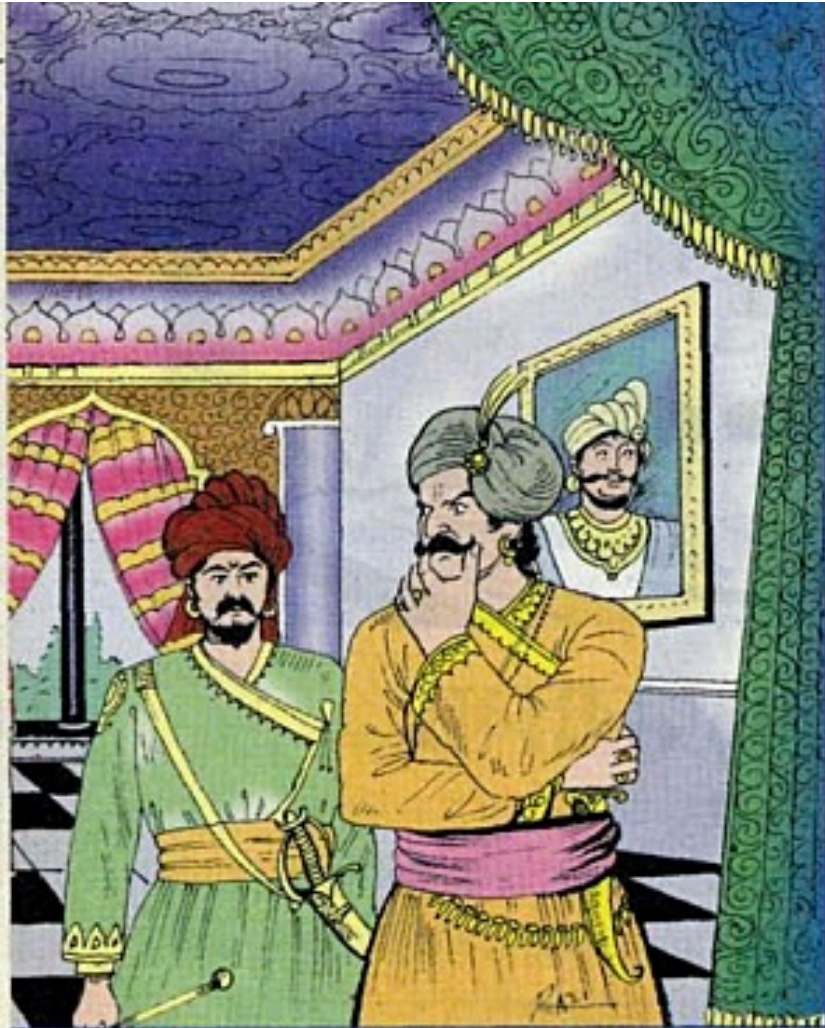
भारी चंद्र को ले आना असंभव है। कृपया मुझे क्षमा कर दीजिए।''

सेनापति के इस जवाब से नाराज़ राजा ने कहा, ''तुरंत मेरी नज़रों से दूर हो जाओ। आस्थान के जादूगर को भेजो।''

जादूगर तुरंत वहाँ आ पहुँचा। राजा की आज्ञा को सविस्तार सुनने के बाद वह कहने लगा, ''प्रभु, मैंने युवरानी को संतुष्ट करने के लिए कितने ही जादुओं का प्रदर्शन किया। सात प्रकार के अद्भुत जूते, मंत्रदंड आदि दे चुका हूँ। परंतु चंद्र को ले आना किसी के लिए भी मुमकिन नहीं है। वह हमसे चार हज़ार योजन की दूरी पर है। अलावा इसके, वह राजमहल से दस गुना बड़ा है। वह स्वच्छ मक्खन, मलाई से बनाया गया है। कृपया मुझे माफ़ कर दीजिए।''

ऐंद्रजालिक के उत्तर से असंतुष्ट होकर राजा ने उसे तुरंत वहाँ से भेज दिया और आस्थान के गणित शास्त्रज्ञ को बुलवाया। जैसे ही उसने कमरे में क़दम रखा, राजा ने क्रोध-भरे स्वर में कहा, ''कितने सालों से आप हमारे लिए क्या-क्या करते आ रहे हैं, इनका हिसाब मत दीजिए। युवरानी के लिए चन्दामामा को ले आने के लिए गणित को उपयोग में लाइये।''

गणित शास्त्रज्ञ थोड़ी देर तक हिसाब लगाता रहा। फिर कहा, ''प्रभु, वह हमसे तीन हज़ार योजन और चार कोस की दूरी पर है। सिक्के की तरह वह चिकना होता है और रेत व चूने के मिश्रण से बना है। इतना ही नहीं, वह आकाश से इतना चिपकाया हुआ है कि उसे अलग नहीं किया जा सकता। मैं ही नहीं, कोई भी उसे ले आने की क्षमता नहीं रखता। दया करके मुझे माफ़ कर दीजिए।''

राजा का मुख क्रोध से तमतमा उठा। उसने उसे वहाँ से भेजने के बाद आस्थान के विदूषक को बुलवाया और युवरानी की अस्वस्थता का कारण बताते हुए कहा, ''चन्दामामा यहाँ से कितनी दूरी पर है, इस विषय पर सेनापति, जादूगर व गणित शास्त्रज्ञ के विचार अलग-अलग हैं।''

विदूषक ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, ''राजन्, यह तो बड़े ही आश्चर्य की बात है। तीनों के तीनों मेधासंपन्न हैं। हो सकता है, उन्होंने जो कहा, वही सही हो। पर इन सबसे बढ़कर

हमारे लिए यह जानना बहुत ज़रूरी है कि इस विषय में युवरानी का क्या विचार है। उनकी दृष्टि में चंदामामा कितनी दूरी पर है, कितना बड़ा है, यह जानना हमारे लिए मुख्य है।''

यों कहते हुए जैसे ही विदूषक युवरानी के पलंग के पास गया, युवरानी ने बड़ी ही उत्कंठा-भरे स्वर में पूछा, ''क्या चन्दामामा ले आये?''

''यह तो मेरे बायें हाथ का खेल है युवरानी, परंतु उसके पहले यह जानना मेरे लिए ज़रूरी है कि आपकी दृष्टि में वह कितना दूर है, कितना बड़ा है और किससे वह बनाया गया है,'' विदूषक ने कहा।

''पहले ही कोई मुझसे पूछता तो बता देती। चन्दामामा मेरे कनगुरिये के नाखून के समान है। खिड़की के बाहर का पेड़ जितना ऊँचा है, वह भी उतना ही ऊँचा है। मैंने देखा कि वह कभी-कभी पेड़ की टहनियों में फंस जाता है। और चमकता रहता है। आखिर क्यों नहीं, वह सोने से बनाया गया है न!''युवरानी ने कहा।

''ठीक है युवरानी। मैं समझ गया। आज ही रात को मैं पेड़ पर चढ़ जाऊँगा और जैसे ही पेड़ की टहनियों में वह फंस जायेगा, उसे मैं ले आऊँगा।'' विदूषक ने युवरानी को आश्वासन दिया। विदूषक ने तुरंत आस्थान के सुनार को बुलवाया और युवरानी के कनगुरिये से थोड़ा-सा बड़ा सोने का चन्दामामा बनवाया।

सुनार ने एक छोटे से सोने के हार में उसे लगाया और विदूषक को देते हुए पूछा, ''बात क्या है? ऐसा क्यों करवाया?''

''देखते नहीं, यह चन्दामामा है,'' विदूषक ने हँसते हुए कहा। ''परंतु चन्दामामा तो तीन योजनों की दूरी पर है। वह कांसे का है। और है, गोल भी।'' सुनार ने कहा।

विदूषक सीधे युवरानी के पास गया और अपना बनाया हुआ चन्दामामा उसके हाथ में रख दिया। उसे देखकर वह खुशी के मारे फूली न समायी। दूसरे ही दिन वह स्वस्थ हो गयी और बगीचे में जाकर खेलने-कूदने लगी।

परंतु राजा को अब भी लग रहा था कि इससे उसकी बेटी के चन्दामामा की समस्या का हल नहीं हुआ। वह सोचने लगा कि अंधेरा छा जाते ही आकाश में जब चांद दिखने लगेगा तो मेरी बेटी समझ जायेगी कि मेरे हार का चांद नकली

है और असली चांद आकाश में है। तब फिर से उसकी तबीयत बिगड़ जायेगी।

राजा ने विदूषक से अपने संदेह के बारे में प्रश्न किया। इस पर विदूषक ने मुस्कुराते हुए कहा, ''इसको लेकर आप चिंतित मत होइये। हमारे आस्थान के दिग्गजों ने चंद्रमामा की दूरी, आकार और निर्माण को लेकर तरह-तरह के विचार व्यक्त किये। परंतु युवरानी ने स्वयं उसके रंग व आकार का स्पष्टीकरण किया और समस्या का हल कर दिया। आज रात को चंदामामा जब आकाश में प्रकट होगा तब इस समस्या का हल भी उन्हीं को सुझाने के लिए कहूँगा,'' विदूषक की बातों में विश्वास था।

अंधेरा हो जाने के थोड़ी देर बाद जब चन्दामामा आकाश में स्पष्ट दिखायी देने लगा और युवरानी के कमरे की खिड़की के बाहर के पेड के पीछे आ गया तब विदूषक उसके पास गया और दुख-भरे स्वर में पूछा, ''पुत्री युवरानी, जब चांद आपके गले के हार में लटक रहा है तब कोई दूसरा चांद पेड़ की टहनियों के पीछे कैसे जा सकता है? इसलिए मैं बहुत चिंतित हूँ।''

युवरानी ने विदूषक को आश्चर्य भरी आँखों से देखते हुए कहा, ''चिंता किस बात की? समझ लीजिए, मेरे मुँह का एक दांत गिर गया, तो क्या उसकी जगह पर दूसरा दांत नहीं निकलता? बग़ीचे के पौधों व फूलों को हम काट देते हैं तो क्या फिर से पौधे और फूल नहीं उगते? चाँद के विषय में भी यही होता है।'' कहती हुई जंभाई लेकर वह नींद की गोद में चली गयी।

''युवरानी, आस्थान के सभी विद्वान एक तरफ़ तो आप अकेली दूसरी तरफ़।'' अपने आप यों कहता हुआ विदूषक कमरे के बाहर आ गया।

इसके बाद विदूषक राजा से मिला और कहा, ''प्रभु, युवरानी ने स्वयं कहा था कि उनके गले में जो चन्दामामा है, वही असली है और जो आकाश में चमक रहा है, वह नक़ली है। इसलिए इसके विषय में आप निश्चिंत हो जाइये।''

विदूषक ने इस समस्या को बड़ी ही सुगमता से सुलझा दिया, इस पर राजा बहुत खुश हुआ और अपने गले का हार उसे भेंट में दे दिया।

सुमेध की कीर्ति दूर-दूर तक अवश्य फैलनी चाहिए।

मेरा सुझाव है कि हम दूसरे राज्यों को अपने राज्य में मिलाकर उनकी सम्पत्ति ले लें।

लेकिन लूट का धन ज्यादा दिनों तक नहीं टिकेगा, बीर सिंह !

जो भी हो, सेनापति बीर सिंह महत्वाकांक्षी है। वह अपने कमानों की एक गुप्त बैठक बुलाता है।

याद रखो, हमारा पहला कर्त्तव्य हमारी तलवार के प्रति है !

हाँ हुजूर, हमें उनमें कभी ज़ंग नहीं लगने देना चाहिए।

सावधान, दीवारों के भी कान होते हैं!
एक सैनिक को संदेह हो गया और वह राजा को खबर देने लगा।
मुझे राजा को अवश्य सूचित करना चाहिए।
बैठक आधी रात के बाद तक चलती रही महाराज।
वे राजकुमार के जन्मदिन समारोह के बारे में चर्चा कर रहे होंगे। जो भी हो, बैठक के बारे में किसी को न बताना।
जी हाँ महाराज, कुछ और खबर मिली तो आपको सूचित करूँगा।

शान्तिपुर में उत्सव का वातावरण है।
हर जगह झण्डों के साथ तोरण द्वार बने हैं।
लोग राजकुमार के लिए उपहार ला रहे हैं।
आह ! फाटकों और दरवाजों पर पहरेदार नहीं हैं !
महारानी साहिबा, भगवान इन्हें दीर्घायु बनायें !
मेरी गतिविधियों पर रोक लगानेवाला कोई नहीं है।
लोग संगीत और नृत्य में खो जाते हैं और उन्हें होश नहीं रहता कि अन्यत्र क्या हो रहा है।

मैं थक गई हूँ। मैं अब आराम के लिए जाती हूँ।
अचानक राजा रानी के कमरे में शीघ्रता से प्रवेश करता है।
क्या बात है स्वामी?
दासियों को जाने के लिए कह दो।
हम लोगों के प्राण खतरे में हैं, रानी। तुम्हें अपने बच्चे के साथ अभी इस स्थान को छोड़ना होगा। गुप्त मार्ग से निकल जाओ।
आप मुझे कहाँ भेजना चाहते हैं, प्रभु?
क्रमशः

मनोरंजन टाइम्स
हाय! हो! क्या तुम बता सकते हो
कि कौन-सा फूल मेरे हाथ के फूल
से मिलता है?
1
1
2
3
4
5
6
7
उप्स!
नीचे के दो चित्रों में सात अन्तर हैं।
क्या उन्हें ढूँढ सकते हो?
2

इन पत्तों के पीछे
कुछ जाने-पहचाने
पशु छिपे हुए हैं।
क्या उनके नाम
बता सकते हो?

3

घोंचू घोंघा अपनी
टॉफी लेने की जल्दी
में है। भुलभुलैया से
होकर अपना रास्ता
ढूँढने में उसकी
मदद करो।

(उत्तर - पृष्ठ ७८ पर)

4

चित्र कैप्शन प्रतियोगिता

M. Kameswara Rao

Mahantesh C. Morabad

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो?

चित्र परिचय प्रतियोगिता, चन्दामामा,
प्लाट नं. ८२ (पु.न. ९२), डिफेन्स आफिसर्स कालोनी, इकाडुथांगल, चेन्नई -६०० ०९७.

जो हमारे पास इस माह की २० तारीख तक पहुँच जाए । सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर १००/-रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा ।

बधाइयाँ

मई अंक के पुरस्कार विजेता हैं :

तन्वी जैन,
B-6, प्रताप नगर,
जयपुर हॉउस, आगरा.

विजयी प्रविष्टि

तमन्ना है छू लेने की आकाश ।
है मोहक नज़ारों की तलाश ।।

मनोरंजन टाइम्स के उत्तर (पृष्ठ-७६-७७)

१. फूल संख्या - ६
२. सात अन्तर हैं - क्रैकर्स, बाघ की पूंछ, पॉकेट पर बटन, हाथी का कान, हाथी का बेल्ट, लोमड़ी की जीभ, जूते का फीता।
३. पशु हैं - हाथी, शेर, कंगारू, गधा, मोर, बतख, तोता, खरगोश, बकरी, गरुड़, लोमड़ी, मछली, हिरन, कौवा।

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K. Press Pvt. Ltd., Chennai - 600 026 on behalf of Chandamama India Limited, No. 82, Defence Officers Colony, Ekkatuthangal, Chennai - 600 097. Editor : Viswam